चन्दामामा
अगस्त १९७९
Rs
35

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनाम ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०

केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रँगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पते पर भेजिए P.B. No. 9928, COLABA, Bombay-400 005.
परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name .... Age ....

Address ....

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

CONTEST NO. 10

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।
चित्र भेजने की अंतिम तारीख: 31-8-1979

सबसे दिलचस्प शौक़ फोटोग्राफ़ी को अब लिबर्टी कैमरा ने कितना सरल, कितना कम ख़र्च बना दिया है...!

नये शौक़ीन हों या कैमरा विशेषज्ञ, स्माइली और लूना कैमरा से फ़ोटोग्राफ़ी का मज़ा तो आता है ही, इनसे फ़ोटो खींचना बड़ा सरल है। खर्च भी कम आता है।

स्माइली

- नये शौक़ीनों के लिए आदर्श
- चलाने में आसान
- देखने में आकर्षक
- १२७ रॉल फ़िल्म पर ४ सें.मी. × ४ सें.मी. की १२ तस्वीरें लेता है।

लूना

- फ़ोटोग्राफ़ी का असली मज़ा लेने के लिए
- १२० रॉल फ़िल्म पर ६ सें.मी. × ६ सें.मी. की १२ तस्वीरें खींचता है।
- इलेक्ट्रॉनिक फ़्लैशगन भी इस्तेमाल कर सकते हैं।

उत्पादक:
फ़ोटो इंडिया
९७, सरदार पटेल रोड, सिकन्दराबाद, ५०० ००३

maa HFI/34/78 Hin

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "अक्षम्य अपराध" है। मानवों के चरित्र का सही अंदाजा लगाना हो तो उसके पीछे जो प्रेरणा और चवित्र का परिणाम है, उनका भी सही ज्ञान प्राप्त करना होगा। कई लोग स्वार्थवश बहुत ही "अच्छा" व्यवहार करते हैं; पर कभी वह कायरता भी उत्तमता के रूप में मानी जाती है।

अमर वाणी

दारिद्र्यस्य परामूर्तिः याच्ञाना द्रविणल्पता
जरद्गवधन श्शंभुः तथापि परमेश्वरः ।।

[दरिद्रता की पराकाष्ठा याचना है, पर धन का अभाव नहीं है। वृद्ध वृषभ के होने पर भी शिवजी परमेश्वर ही हैं याने ऐश्वर्यवान हैं।]

वर्ष : ३१ अगस्त १९७९ अंक : १२

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

टी. गोपीकृष्ण, नेल्लूर (आन्ध्र)

प्रश्न: पृथ्वी के वजन का कैसे पता लगाया गया?

उत्तर: किसी वस्तु के गुरुत्वाकर्षण की शक्ति के द्वारा या शक्ति के प्रयोग के द्वारा "वजन" का पता लगाया जाता है। किसी वस्तु का वजन जमीन पर, ऊँचे पहाड़ पर, भूमध्य रेखा अथवा ध्रुव प्रदेश में भिन्न होता है। इसके अलावा वस्तुओं का अपना "स्वतंत्र या स्वेच्छा पतन" होता है। उस स्थित को भार विहीन स्थिति कहते हैं। जो लोग कृत्रिम उपग्रहों में भ्रमण करते हैं, उनका अपना कोई वजन नहीं होता। इसी प्रकार सूर्य के चतुर्दिक पृथ्वी के परिभ्रमण को "स्वेच्छा पतन" की स्थिति कहते हैं। पृथ्वी का कोई वजन नहीं होता। क्या आप ने कभी प्रदर्शिनियों में "जयंट व्हील" में चक्कर लगाया? उसमें जब हम ऊपर जाते है, तब हमारा वजन थोड़ा बढ़ता है। पर उतरते वक्त हमारा वजन थोड़ा घटता है। पृथ्वी में गुरुत्व चुंबक शक्ति होती है, जिससे उस पर प्रत्येक वस्तु का थोड़ा-बहुत वजन होता है। चन्द्रमण्डल पर भी गुरुत्व चुंबक शक्ति होती है। पर वह पृथ्वी की चुंबक शक्ति में छठा हिस्सा मात्र होती है। याने पृथ्वी पर से चन्द्रमण्डल पर वस्तुओं का वजन छे गुने कम होता है। यह चुंबक वस्तु के भीतर की 'राशि' के द्वारा उत्पन्न होता है। वैसे वजन में तो परिवर्तन होता है पर राशि सदा समान होती है। इस कारण दोनों परस्पर आकर्षित करते हैं। लेकिन चन्द्रमा की चुंबक शक्ति पृथ्वी से कहीं ज्यादा होती है। मंजिलवाले राकेटों की मदद से अंतरिक्ष यात्रा करनेवालों की गति जब तक राकेट जलते हैं, तब तक उनकी गति भी बढ़ती रहती है। अंतिम राकेट का मण्डल जब समाप्त होता है, तब अंतरिक्ष यान "स्वेच्छा पतन" का कारण भूत बनता है। यदि उचित गति रही तो वह पृथ्वी की चुंबक परिधि को पार कर चन्द्रमा की चुंबक परिधि के क्षेत्र में प्रवेश कर पुनः गति को प्राप्त करता है। तब अंतरिक्ष यात्री फिर से थोड़ा वजन प्राप्त करते हैं। मगर यदि वे चन्द्रमा के चारों तरफ़ के मण्डलों में परिभ्रमण करना प्रारंभ करते हैं तो पुनः उनका वजन घट जाता है लेकिन सूर्य के चतुर्दिक के मण्डलों की परिक्रमा करनेवाले किसी ग्रह का कोई वजन नहीं होता।

अपरीक्षित कारकम्

[७३]

चारों मित्रों के सुझाव सुनकर भैरवानंद प्रसन्न हुआ और उन्हें चार मंत्र फूंकी गई बत्तियां तैयारकर देते हुए बोला–"तुम चारों हिमालयों में चले जाओ, जिस प्रदेश में बत्ती पूर्ण रूप से जलकर गिर जाएगी, वहां पर ज़रूर तुम्हें खजाना मिलेगा। उसे तुम लोग खोदकर ले लो। लेकिन तुम लोग प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन मत करो। तुम्हारी गरीबी के दूर होने लायक़ धन के प्राप्त होते ही तुम लोग अपने अपने घर चले जाओ।"

इस पर उन चारों मित्रों ने भैरवानंद को धन्यवाद दिया और हिमालयों की ओर चल पड़े। वे लोग जब हिमालय की पहली सीढ़ियां पार कर रहे थे, तब अल्पलोभी की बत्ती जलकर गिर गई। उसने वहां पर खोदकर देखा, उसे तांबे के सिक्कों का खजाना हाथ लगा।

अल्पलोभी बड़ा खुश हुआ और बोला–"हम लोग जितने सिक्के ढो सकते हैं, उतने उठाकर अपने घर चले चलेंगे।"

"अरे पगले, यह कमबख्त तांबा हमारी गरीबी को कहीं दूर कर सकता है? चलो, आगे बढ़ेंगे!" बाक़ी तीनों ने कहा।

"तुम लोग चले जाओ! मैं नहीं चलता। मुझे ये तांबे के सिक्के काफी हैं।" यों कहते अल्पलोभी तीन हज़ार तांबे के सिक्कों की गठरी बांधकर अपने घर चला गया।

दूसरे दिन मितलोभी की बत्ती जल उठी और भस्म होकर गिर गई। उसने वहां पर खोदकर देखा, उसे चांदी के सिक्कों का खजाना दिखाई दिया।

वह प्रसन्न होकर चिल्ला उठा—"हम जितना भार ढो सकते हैं, उतने वजन के सिक्के लेकर घर चले चलेंगे। अब हमें आगे बढ़ने की कोई जरूरत नहीं है।"

इस पर बाक़ी दोनों ने कहा—"पहले तांबे के सिक्के मिले हैं और अब चांदी के सिक्के हाथ लगे हैं। इस बार सोने के सिक्के मिल जायेंगे, इसलिए चलो, हम आगे बढ़ेंगे।"

"मुझे सिर्फ़ ये चांदी के सिक्के पर्याप्त हैं! अब मैं आगे नहीं बढ़ूंगा; मैं इन सिक्कों से संतुष्ट हूं।" यों समझाकर मितलोभी पांच हज़ार चांदी के सिक्के लेकर अपने घर चला गया।

तब बाक़ी दोनों आगे बढ़े, दूसरे दिन अतिलोभी के हाथ की बत्ती जलकर नीचे गिर गई। वहां खोदने पर उन्हें सोने के सिक्कों का खजाना दीख पड़ा। तब उसने अत्यंत खुश होकर कहा—"हम जितने सिक्के ढो सकते हैं, उतने उठाकर अपने अपने घर ले चलेंगे।"

तब अत्यंतलोभी ने कहा—"अरे मूर्ख! पहले तांबे के सिक्के मिले, फिर चांदी और सोने के! इस बार प्राप्त होनेवाले खजाने में नव रत्न होंगे! उनमें से एक रत्न हमारी सारी दरिद्रता को दूर करने के लिए पर्याप्त है। ऐसी हालत में हम जितने रत्न ढो सकते हैं, उतने रत्न ले जायेंगे तो हम राज्य के राज्य ही खरीद सकते हैं! तुम जितना सोना ढो सकते हो, वह सारा सोना भी एक हीरे के मूल्य के बराबर का न होगा! इस तुच्छ सोने को ढोकर ले जाने से फ़ायदा ही क्या है?"

इस पर अतिलोभी ने कहा—"दोस्त! मुझे तो सोना पर्याप्त है! हम गरीबी से मुक्त होने के लिए ही घर से चल पड़े हैं, राज्यों का संपादन करने के लिए नहीं; हमने अपनी जिंदगी में सोने का स्पर्श तक नहीं किया, ऐसे सोने को तुम तुच्छ सोना बताते हो? मेरी दृष्टि में यह सोना बड़ा ही मूल्यवान है! इस सोने

को लेकर मैं जिंदगी भर धनी बना रहूँगा और गरीबी पर विजय पा सकूँगा। इससे बढ़कर मैं कुछ नहीं चाहता! लोभ किसी हालत में अच्छा नहीं होता।"

ये बातें सुन अत्यंतलोभी बोला—"उफ़! तुम नहीं जानते! जैसी कामना होती है, वैसी कमाई! मैं यह बात साबित करूँगा! तुम इस कूड़े-करकटवाले सोने को यहीं पर फेंककर मेरे साथ चलो!"

"मैं आगे बढ़ना नहीं चाहता! मेरे लिए यह धन पर्याप्त है! फिर भी मैं तुम्हारा इंतजार यहीं रहकर करता रहूँगा। हम दोनों मिलकर लौट जायेंगे।"

इसके बाद अत्यंतलोभी अकेला ही आगे बढ़ा। पहाड़ बहुत ही भयंकर और दुर्गम थे। तीन दिन बीत गये, फिर भी उसकी बत्ती के जलकर गिरने के लक्षण दिखाई न दिये। वह एक घाटी में पहुँचा, जो निर्जन और निर्जल था। कड़ी धूप पड़ रही थी। कहीं एक बूंद पानी या कोई प्राणी भी दिखाई न दिया। सब जगह छोटी-छोटी पगडंडियाँ और कंटीली झाड़ियाँ फैली थीं। फिर भी किसी आशा को लेकर वह आगे बढ़ा। उसने अतिलोभी के पास वापस लौटने का नाम नहीं लिया।

बहुत दूर आगे बढ़ने पर उसे एक मैदान दिखाई दिया। उसके चारों तरफ़ पहाड़ फैले हुए थे। वहाँ पर एक आदमी बैठा हुआ था। उसके सर पर एक चक्र घूमते उसके रक्त को मथ रहा था। उसके बदन तथा चेहरे पर भी बराबर खून टपक रहा था।

अत्यंतलोभी ने उस व्यक्ति के पास जाकर पूछा—"महाशय, तुम कौन हो? तुम यहाँ पर खड़े होकर अपने सिर पर चक्र को क्यों घुमा रहे हो? कहीं रत्नों के खजाने का पता लगाने के लिए यह कोई यज्ञ तो नहीं है? यहाँ कहीं पानी मिल सकता है?"

उसके मुँह से ये शब्द पूरे भी न हो पाये तब वह चक्र अत्यंतलोभी के सर

पर उड़कर चला आया और घूमने लगा। तब उसने घबराकर पूछा–"महाशय, यह क्या है? मुझे तो बड़ी पीड़ा हो रही है?"

तब उस आदमी ने कहा–"जैसे यह चक्र तुम्हारे सर पर कूद पड़ा है, वैसे मेरे सर पर कूदकर आज तक मुझे पीड़ा पहुँचाता रहा है।"

"तब तो यह मुझे कब छोड़ेगा? बराबर सर पर घूमते खून टपकाते मुझे पीड़ा पहुँचा रहा है?" अत्यंतलोभी ने उत्सुकतापूर्वक कहा।

"तुम्हारे ही जैसे कोई व्यक्ति जादू की बत्ती प्राप्तकर तुम से जब बात करेगा, तभी यह चक्र तुम्हारे सिर से उस व्यक्ति के सिर पर बदल जाएगा।" उस व्यक्ति ने कहा।

"तुम इस चक्र को अपने सर पर लिए कितने समय से यहाँ पर खड़े हुए हो?" अत्यंतलोभी ने पूछा।

"बताओ, इस वक़्त यहाँ का राजा-कौन है?" उस व्यक्ति ने पूछा।

"वीणा वत्सराजा उदयन हैं।" अत्यंतलोभी ने उत्तर दिया।

"मैं बता नहीं सकता कि कब से मैं यहाँ पर खड़ा हुआ हूँ। लेकिन जब रामचन्द्रजी राज्य कर रहे थे, उस समय मैं गरीबी से तंग आकर एक जादू की बत्ती हाथ में ले यहाँ पहुँचा। लोभ में पड़कर सुखपूर्वक जीवन बिता सकनेवाली संपत्ति से संतुष्ट न हो अपने मित्रों को पीछे छोड़ आगे बढ़ा और यहाँ पर एक आदमी को देखा। उसके सिर को यह चक्र मथ रहा था। मैंने उससे पूछा, तुम यहाँ पर क्यों हो? क्या यहाँ कहीं पानी है? दूसरे ही क्षण वह चक्र मेरे सिर पर उछलकर आया। तब से मैं कई युगों से यहाँ पर पीड़ा का अनुभव करते खड़ा हुआ हूँ! क्योंकि इस ओर से कोई गुजरता नहीं, भगवान का मुझ पर अनुग्रह था, इसलिए तुम मंत्र की बत्ती लेकर यहाँ आये और तुमने मुझे मुक्त किया।" उस व्यक्ति ने समझाया।

भल्लूक मांत्रिक

[१३]

[राजा दुर्मुख साहस करके अपने राज्य पर अधिकार करनेवाले सामंत का पीछा करते क़िले में पहुँचा। बधिक भल्लूक और उग्रदण्ड क़िले के दर्वाजे तोड़ने की कोशिश कर रहे थे, तभी वहाँ पर एक माया. मर्कट आ पहुँचा, लेकिन कालीवर्मा और भल्लूक मांत्रिक को वहाँ पहुँचते देख क़िले की दीवार के ऊपर से भीतर कूद पड़ा। बाद...]

कालीवर्मा और भल्लूक मांत्रिक को देख बधिक भल्लूक उत्साह से भर उठा, उछल-कूद करते अपने परसु को घुमाते बोला–"महानुभाव! ओह, कितने दिन बाद आप दोनों के दर्शन का भाग्य मुझे प्राप्त हुआ! अब मेरी तक़लीफ़ें ज़रूर दूर हो जायेंगी।"

भल्लूक मांत्रिक भैंसे पर से उतर पड़ा। बधिक भल्लूक के समीप जाकर बोला–"अरे भल्लूक, अभी से उत्साह में आकर उछल-कूद मत करो! उस विचित्र मर्कट रूप में आया हुआ व्यक्ति सच्चे में बंदर नहीं है, वह तो मिथ्या मिश्र नामक तांत्रिक का शिष्य भ्रांतिमति है, वह मेरे मंत्र-दण्ड को चुरा लाया है, पहले हमें उसे प्राप्त करना होगा।"

बधिक भल्लूक की समझ में कुछ न आया, वह सिर्फ़ सर हिलाता रहा, तब

आप मानवों के बीच आये मुझ राक्षस को देख अचरज में आकर देरी न करो। माया मर्कट के मुँह से हमने सुना है कि तुम लोगों का पीछा करने ये सिपाही राजा जितकेतु के द्वारा भेज गये लोग हैं। उनके द्वारा होनेवाले खतरे से तुम कैसे बचना चाहते हो?"

इस पर कालीवर्मा ने अपने घोड़े को मोड़ दिया, उसी क्षण तलवार खींचकर उग्रदण्ड से बोला—"मैं तुम्हारा नाम तो नहीं जानता, पर यह तो बताओ कि यहाँ पर जो दल है, इसका नेता तुम हो या बधिक भल्लूक?"

कालीवर्मा आश्चर्य के साथ राक्षस उग्रदण्ड की ओर देखते हुए बोला—"बधिक भल्लूक, तुमने यह राक्षस, हाथी और इस परिवार को कैसे प्राप्त किया?"

ये बातें सुन उग्रदण्ड धीरे से हँस पड़ा और बोला—"भाई, कालीवर्मा नामक क्षत्रिय युवक तुम्हीं हो न? तुम्हारे बारे में मैंने बधिक भल्लूक के मुँह से सारी बातें सुन ली हैं। तब तो ये ही व्यक्ति भल्लूक मांत्रिक हैं न?" फिर दूर पर खड़े चन्द्रशिला नगर के राजा जितकेतु के मंत्री तथा उसके साथ के थोड़े से घुड़सवारों और सिपाहियों की ओर कालीवर्मा का ध्यान आकृष्ट करते हुए बोला—"कालीवर्मा,

राक्षस उग्रदण्ड इस सवाल का जवाब देने जा रहा था, तब बधिक भल्लूक अचानक जोर से चिल्ला उठा—"सिरस भैरव!" तब धीरे से बोला—"कालीवर्मा साहब! इस राक्षस उग्रदण्ड, चोरों के सरदार नागमल्ल, राजा दुर्मुख के अंग रक्षक—इन सब का नेता मैं हूँ। आज्ञा दीजिए, अब हमें क्या करना होगा?"

चिंता के मारे परेशान हो चारों तरफ़ नज़र दौड़ानेवाले भल्लूक मांत्रिक की ओर मुड़कर कालीवर्मा बोला—"गुरुजी! आप की क्या आज्ञा है? आप ने एक बार राजा जितकेतु को अपनी ताक़त का परिचय दिया था, ऐसी हालत में उसका मंत्री

जीवगुप्त हम पर फिर से हमला करने की हिम्मत करेगा, सो यह बात में बिल्कुल समझ नहीं पाता! देखिए, दूर पर घोड़े पर सवार हो वह कैसे कांप रहा है!"

भल्लूक मांत्रिक ने निराशापूर्वक क़िले के बंद दर्वाजों की ओर एक बार नज़र दौड़ाई, तब कहा–"मेरे गुरु को मुसीबतों में फंसानेवाले तांत्रिक का शिष्य है यह माया मर्कट। मुझे मालूम न था कि वह गुप्त रूप से मेरा अनुसरण कर रहा है, इसीलिए असावधान रहकर में अपना मंत्र दण्ड खो बैठा। अगर पहले ही मुझे उसका समाचार मिल जाता तो में अपने मंत्र-दण्ड को नदी के किनारे पेड़ के तने पर टिकाकर नदी में नहाने के लिए उतर न पड़ता।"

बधिक भल्लूक अपने परसु को दोनों हथेलियों पर आड़े रखकर मांत्रिक के आगे आया, तब बोला–"मांत्रिक प्रभू! आप यह सोचकर चिंता न कीजिए कि आप का मंत्र दण्ड खो गया है, यह परसु भी तो मंत्र का प्रभाव रखता है। इसके प्रभाव के सामने उग्रदण्ड जैसा राक्षस भी घबरा गया है। आप इसे स्वीकार करके मुझे पूर्ववत मानव का रूप दे दीजिए।"

"तुम्हें तो अपने गुरु को राजा दुर्मुख का सर समर्पित करना होगा न? क्या यह

बात भूल गये? वह तो क़िले में अब तक सामंत सूर्य भूपति की तलवार के वारों से छितर गया होगा।" राक्षस उग्रदण्ड ने कहा।

राजा दुर्मुख का नाम सुनते ही भल्लूक मांत्रिक पल भर के लिए चौंक पड़ा और बोला–"बधिक भल्लूक! क्या वह राजा अभी तक ज़िंदा है? सामंत सूर्य भूपति कौन है? क़िले के अन्दर किस किसके बीच लड़ाई हो रही है?"

बधिक भल्लूक ने संक्षेप में दुर्मुख का पीछा करनेवाले प्रसंग से लेकर सारा वृत्तांत सुनाया, तब कहा–"मांत्रिक प्रभू! जैसे हमने सोचा था, यह राजा वैसा दुष्ट

नहीं है। फिर आप की जैसी इच्छा! आप पहले मुझे मनुष्य के रूप में बदल डालियेगा। इस भालू के चमड़े के भीतर की गर्मी से मैं परेशान हो रहा हूँ।"

"गुरुजी! बेचारे बधिक भल्लूक की इच्छा की पूर्ति कीजिए।" कालीवर्मा ने समझाया।

इस पर भल्लूक मांत्रिक ने जादू के परसु को अपने हाथ में लेकर कोई मंत्र पढ़ा, परसु को बधिक के पैरों से छुआ दिया। दूसरे ही क्षण उसके पैर मनुष्य के पैरों के रूप में बदल गये। इसके बाद सिर तक सारे बदन को परसु से छुआता गया। कुछ ही पलों के भीतर बधिक भल्लूक का शरीर मानव के शरीर के रूप में बदल गया, मगर उसका सिर भल्लूक का ही बना रहा।

बधिक भल्लूक ने सोचा कि वह साधारण मानव बन गया है, झट से वह भल्लूक मांत्रिक के आगे साष्टांग दण्डवत करके उठकर बोला–"मांत्रिक प्रभू! ओह! मैं कितने समय बाद फिर से मानव बन गया हूँ! शब्दों में व्यक्त करना कठिन है कि अब मुझे कैसा सुख प्राप्त हो रहा है!"

ये शब्द सुनकर डाकू नागमल्ल के साथ सभी लोग जोर से हँस पड़े। बधिक भल्लूक चकित हो उनकी ओर देखने लगा। इस पर राक्षस उग्रदण्ड अपने पत्थरवाले गदे से बधिक के सर का स्पर्श कराकर बोला–"बधिक भल्लूक! तुम्हारा शरीर कंठ तक मनुष्य का ज़रूर है, मगर सर की क्या बात है।"

बधिक ने झट से अपने दोनों हाथों से अपना सर टटोलकर देखा, जोर से कराह कर बोला–"मांत्रिक प्रभू! यह कैसा अन्याय है? मनुष्य का शरीर और भल्लूक का सिर! साधारण भल्लूक के रूप की अपेक्षा यह रूप लोगों के बीच मेरा मजाक उड़ानेवाला है। इस रूप को लेकर मैं जनता के बीच ज़िंदा नहीं रह सकता।"

भल्लूक मांत्रिक ने चितापूर्ण चेहरा बनाकर कहा–"बधिक भल्लूक! तुम फ़िक्र मत करो! फिलहाल इस सर के साथ संतुष्ट हो जाओ। चाहे सर भल्लूक का ही क्यों न हो, उसमें जो दिमाग है, वह मनुष्य का ही है न? मेरे मंत्र दण्ड को माया मर्कट के रूप में आया हुआ दुष्ट भ्रांतिमति अपहरण कर ले गया है, जिससे मेरी थोड़ी सी मंत्र-शक्तियाँ जाती रही हैं। इसीलिए मैं पूर्ण रूप से तुम को मानव नहीं बना पाया। फिर भी मैं अपना मंत्र दण्ड प्राप्त कर तुम्हें पूर्व रूप दिलाने की पूरी कोशिश करूँगा।"

इस पर बधिक भल्लूक आँसू भरते बोला–"इस विचित्र रूप में देख राजा जितकेतु मुझे नगर के प्रधान बधिक का पद कैसे देंगे? मेरी जीविका का उपाय क्या होगा?"

बधिक की चिंता देख कालीवर्मा ने रहम खाकर उसके कंधे पर हाथ रखा, तब कहा–"बधिक भल्लूक! तुम चिंता न करो। राजा जितकेतु के मंत्री जीवगुप्त को जब मालूम हुआ कि मांत्रिक गुरु अपना मंत्र दण्ड खो बैठा है, तब वह हिम्मत करके हमारा अंत करने के ख्याल से सैनिकों को साथ ले हमारा पीछा करते हुए यहाँ तक आ पहुँचा है। लो, दूर पर उस दुष्ट मंत्री और उसके साथ के सैनिकों को देख लो। हमें उन लोगों से भी अत्यंत सावधान रहना होगा।"

बधिक भल्लूक ने सर घुमाकर मंत्री जीवगुप्त की दिशा में सहमी हुई दृष्टि से देखा, डर के मारे कांपते हुए क्षीण स्वर में बोला–"मैं उस राजा की बात तो नहीं जानता, मगर यह मंत्री निश्चय ही मेरा सर कटवा देगा। मैं सब तरह से मुसीबत में फँसा गया हूँ।"

ये शब्द सुनकर भल्लूक मांत्रिक जादू का परसु फिर बधिक के हाथ देते हुए बोला–"बधिक भल्लूक! तुम्हारे भीतर थोड़ी बहुत हिम्मत हो तो सारी विपत्तियों

से यह जादू का परसु तुम्हारी रक्षा करेगा।" यों कहकर अपनी कमर से लटकनेवाली तलवार खींचकर बोला–"यह तलवार मर्कट के द्वारा चुराकर ले गये हुए मंत्र दण्ड जैसी शक्तिशाली भले ही न हो, लेकिन यह जरूर ही मेरी रक्षा करने के लिए पर्याप्त है।"

"तो मेरी आजीविका और नौकरी की बात क्या होगी? में यहां के डाकू नागमल्ल और उसके साथियों जैसे राहगीरों को लूटकर पेट भरनेवाला नीच व्यक्ति नहीं हूँ।" बधिक भल्लूक ने कहा।

उसकी बात पूरी होने के पहले ही डाकू नागमल्ल क्रोध के मारे गरज उठा, कमर से लटकनेवाली तलवार को नीचे डालकर बोला–"अबे, भल्लूक सिरवाले! क्या तुम मुझे नीच बताते हो? लोगों के सहारे और सैनिकों की सहायता से कोई भी कमबख्त बड़ी आसानी से गद्दी पर बैठकर शासन कर सकता है, मगर अकेले जंगली रास्तों से चलनेवाले राहगीरों को लूटकर जीने के लिए सच्ची हिम्मत और शौर्य चाहिए! मैंने अपनी तलवार फेंक दी है, तुम अपने जादू के परसु को नीचे रखकर मेरे साथ मल्लयुद्ध करने को तैयार हो जाओ।" यों कहकर नागमल्ल ने ताल ठोंक दी।

भल्लूक मान्त्रिक ने क्रोध में आकर एक बार सब की ओर देखा, तब कालीवर्मा से कहा–"कालीवर्मा, इन मूर्खों को शायद पता नहीं है कि ये लोग कैसी आफ़त में फँसे हैं? सबको पकड़कर शिरच्छेद कराने के लिए एक ओर राजा जितकेतु का मंत्री योजना बना रहा है! क़िले के अन्दर चाहे राजा दुर्मुख विजयी हो जाय या सामंत, हमारी भलाई की अपेक्षा हानि ही होने का खतरा है! दुष्ट माया मर्कट उन्हें हम पर उकसाने का ज़रूर प्रयत्न करेगा।"

कालीवर्मा क्रुद्ध हो तलवार खींचकर बोला–"क्या तुम लोगों ने मांत्रिक गुरु की बातें सुन लीं? जानते हो, यहां पर तुम सब का नेता कौन है?" राक्षस उग्रदण्ड

को छोड़ बाक़ी सब लोग एक स्वर में चिल्ला उठे–"कालीवर्मा की जय!"

कालीवर्मा संतुष्टिपूर्वक सर हिलाकर राक्षस उग्रदण्ड के समीप जाने को हुआ। तभी मंत्री जीवगुप्त के यहाँ से एक अश्वारोही अपनी तलवार उल्टे ढंग से पकड़कर तेजी के साथ आ पहुँचा। अपने घोड़े को रोककर बोला–"आप सब लोग सावधानी से सुनिये, मैं महाराजा जितकेतु के मंत्री जीवगुप्त के यहाँ से एक खास संदेशा ले आया हूँ।"

"ओह! इसलिए तुम तलवार उल्टे पकड़ लिये हो! वाह! बड़ी अच्छी बात है! सुनाओ, वह संदेशा क्या है?" कालीवर्मा ने पूछा।

"महामंत्री का आदेश है कि यहाँ पर उपस्थित नगर के प्रधान बधिक को तत्काल अपने समक्ष हाज़िर होने का आदेश दे रहे हैं। साथ ही राजा के द्वारा शिरच्छेद का दण्ड पाकर बचकर घूमनेवाले कालीवर्मा नामक अपराधी को भी बन्दी बनाकर ले आने का आदेश दिया है।" मंत्री जीवगुप्त के अश्वारोही ने कहा।

ये बातें सुन भल्लूक मांत्रिक धीरे से हँसकर बोला–"क्यों बधिक भल्लूक! क्या तुमने मंत्री का आदेश सुन लिया है? तुम क्या करने जा रहे हो?"

बधिक भल्लूक तत्काल कोई निर्णय न कर पाया, दो-तीन पल सर झुकाकर मौन खड़ा रहा, तब सर उठाकर बोला–
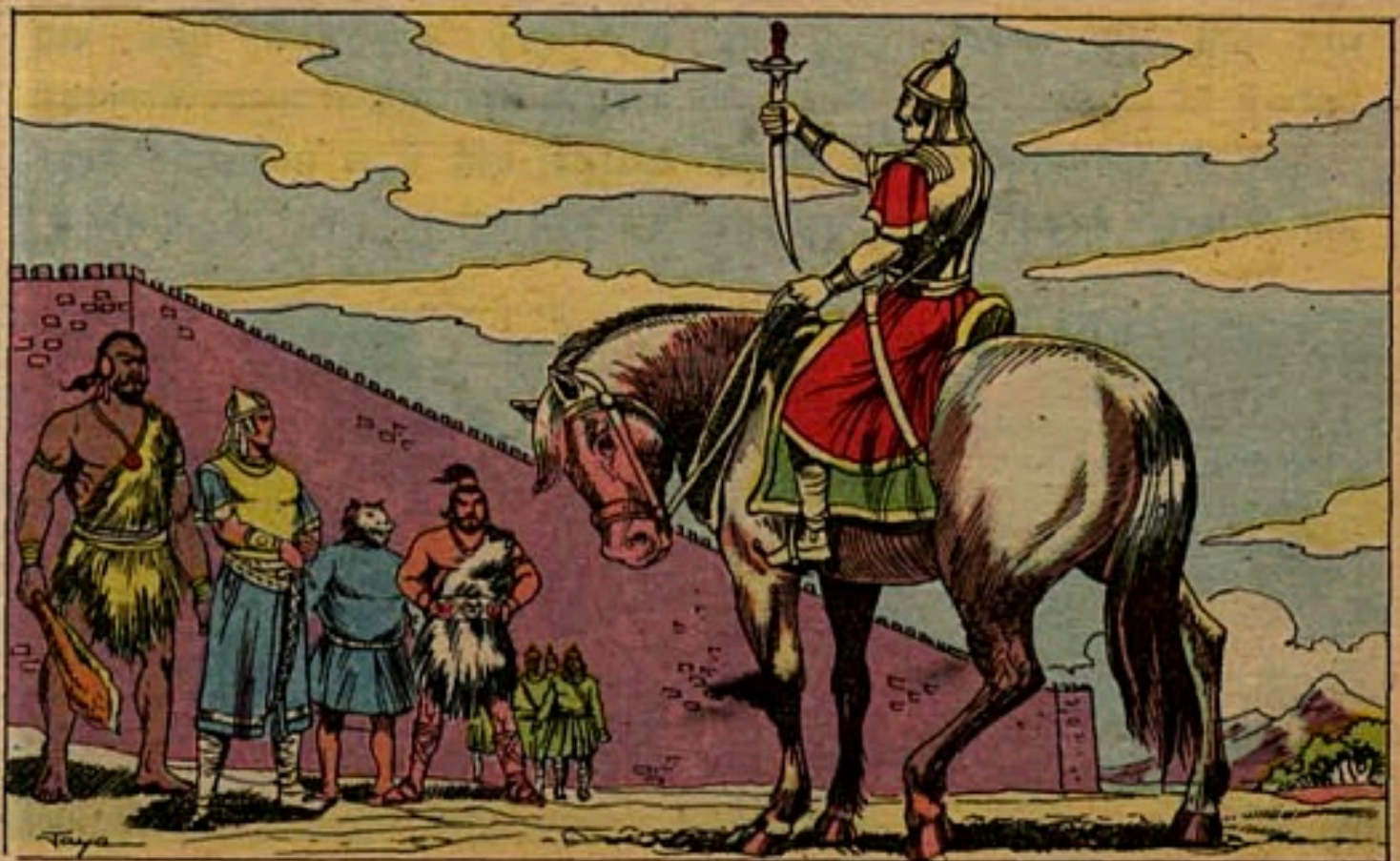
"कालीवर्मा साहब! आप की क्या आज्ञा है? इस भल्लूक सिर के साथ में चन्द्रशिला नगर जाऊँ तो वहाँ के बच्चों के पत्थरों की मार से अपनी जान ही खो बैठूंगा। मेरे बचने का कोई उपाय कीजिए।"

कालीवर्मा ने अपनी तलवार का बधिक भल्लूक के शरीर का स्पर्श कराकर कहा— "बधिक भल्लूक! तुम्हारी स्वामि भक्ति प्रशंसनीय है! हमारा पहला काम तो यह होगा कि हम क़िले के अन्दर पहुँचकर माया मर्कट को पकड़ लेंगे, अगर देरी न हुई तो उस राजा दुर्मुख की जान बचायेंगे। राजा जितकेतु की तुलना में राजा दुर्मुख सब तरह से उत्तम व्यक्ति मालूम होता है। अब मंत्री जीवगुप्त के दूत के उत्तर की बात रही। तुम अपने परसु से उसका सर काटोगे या उसकी तलवार तोड़कर भगा दोगे, यह तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है।"

दूसरे ही क्षण बधिक भल्लूक चिल्ला उठा—"सिरस भैरव!" फिर उछलकर दूत पर कूद पड़ा, उसके हाथ से तलवार खींचकर उसके टुकड़े करके दूर फेंक दिया, तब बोला—"अरे कमबख्त दूत! मैंने राजा जितकेतु का नमक खाया, बदले में बधिक का काम किया, जिससे मेरा ऋण चुक गया। मंत्री जीवगुप्त से कह दो कि वे यहाँ से चुपचाप चले जावे, वरना मैं उनका सर सिरस भैरव को बलि चढ़ा दूंगा।"

ये बातें सुन जीवगुप्त का दूत चीख उठा, अपने घोड़े को मोड़कर दौड़ाने को हुआ, तभी क़िले के बंद दर्वाजों की ओर से बड़ी आवाज़ के साथ ये नारे सुनाई दिये—"कालीवर्मा की जय!"

भल्लूक मांत्रिक के साथ सबने आश्चर्य के साथ सर उठाकर उस ओर देखा। क़िले के दर्वाजे धक् धक् करते जल रहे थे। उनके आगे जंगली युवक, डाकू नागमल्ल और उसके दो अनुचर जलनेवाली लकड़ियाँ हाथ में ले उत्साहपूर्वक उछल-कूद करने लगे।"

(और है)

अक्षम्य अपराध

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, इस संसार में विश्वासपात्र और विनयशील व्यक्तियों के लिए कोई स्थान नहीं है। उल्टे ऐसे व्यक्ति अत्यंत विश्वासघातक माने जाते हैं, इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को रवीन्द्र नामक व्यक्ति की कहानी सुनाता हूं, श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा: एक गाँव में पद्मनाभ और वासुदेव नामक दो दोस्त रहा करते थे। दोनों समान उम्र के थे। विवाहित भी थे। पर वासुदेव को वक़्त ने साथ न दिया। उसकी औरत रवीन्द्र नामक एक लड़के को जन्म देकर मर गई। रिश्तेदारों ने उसकी जमीन-जायदाद

बेताल कथाएँ

हड़प ली और उसे राह का भिखारी बना दिया। इसके बाद थोड़े ही दिनों में वह बीमार पड़ा, मरते वक़्त उसने अपने बेटे रवीन्द्र को पद्मनाभ के हाथ सौंपकर उसकी देखभाल करने की प्रार्थना की।

पद्मनाभ ने अपने वचन का पालन किया। रवीन्द्र का पालन-पोषण अपने पुत्र शेखर के समान ही किया। शेखर और रवीन्द्र एक ही माता के पुत्रों के समान बढ़े और अपने गाँव में ही पढ़ाई पूरी की।

इसके बाद पद्मनाभ ने उन दोनों को उच्च शिक्षा के लिए राजधानी में भेजा, उनके खर्च के वास्ते रुपये अपने पुत्र शेखर के हाथ पहुँचाता रहा।

मगर शहर पहुँचते ही शेखर के व्यवहार में परिवर्तन हुआ। पढ़ाई के प्रति उसकी रुचि बिलकुल कम होती गई और मनोरंजन और विलासों के प्रति उसकी रुचि अधिक हुई। उसे जो रुपये मिलते थे, उनमें से ज्यादा हिस्सा शराब, जुआ आदि के पीछे खर्च करने लगा। लेकिन रवीन्द्र ने पढ़ाई में ही अपना मन लगाये रखा और शेखर को सुधारने की कोशिश की। मगर कोई फ़ायदा न रहा। उसने सोचा कि शेखर के इस व्यवहार का परिचय पद्मनाभ को दे, लेकिन इस डर से उसने ऐसा न किया कि पद्मनाभ को सूचित करने पर शायद शेखर वह थोड़ी-बहुत सहायता तक न करेगा।

एक बार शेखर और रवीन्द्र अपने गांव लौटे। पद्मनाभ ने उनकी पढ़ाई के बारे में जब पूछा, तब शेखर ने जवाब दिया कि उनकी पढ़ाई तो ठीक से चल रही है। उस वक़्त भी रवीन्द्र ने शेखर के इस परिवर्तन का समाचार पद्मनाभ को नहीं दिया।

दोनों लड़के जिस दिन शहर में जानेवाले थे, उसके पहले दिन पद्मनाभ के रुपये गायब हो गये। पद्मनाभ ने सब को बुलाकर रुपयों के बारे में पूछा। शेखर ने बताया–"बाबूजी, शायद रवीन्द्र ने चुराया हो, पता लगाइये।"

पर पद्मनाभ रवीन्द्र पर संदेह न कर पाया। क्यों कि वह शेखर से ज़्यादा पद्मनाभ को प्रिय था। फिर भी पद्मनाभ ने रवीन्द्र से पूछा। रवीन्द्र यह बात सुन चकित रह गया। क्यों कि पद्मनाभ को मालूम था कि वे रुपये शेखर ने ही चुरा लिये हैं। शेखर ने न केवल रुपयों की चोरी की, बल्कि उसने अपने पिता के सामने रवीन्द्र से पूछा भी था–"तुम्हें अगर रुपयों की जरूरत थी तो बाबूजी से पूछ लेते? चोरी क्यों की? यह तो कोई अच्छी आदत नहीं है।"

रवीन्द्र समझ गया कि शेखर ने रुपये लेने की बात अपने पिता से नहीं कही और साथ ही रवीन्द्र भी यह नहीं चाहता था कि शेखर के प्रति पद्मनाभ के मन में बुरी भावना पैदा हो, इस ख्याल से

रवीन्द्र ने खुद मान लिया कि उसी ने रुपये चुराये हैं।

पद्मनाभ के मन में पहली बार रवीन्द्र के प्रति घृणा का भाव पैदा हुआ। उसने झिड़ककर कहा–"रवीन्द्र! मैंने तुम्हारे पिता को वचन दिया था कि तुम को मैं एक योग्य व्यक्ति बनाऊँगा। अपने उस वचन का पालन करने के लिए मैंने अपनी शक्ति भर कोशिश की। लेकिन अब मैं देखता हूँ कि मेरी सारी मेहनत मिट्टी में मिल गई है।" इस पर रवीन्द्र सर झुकाकर वहाँ से चला गया।

इसके थोड़े दिन बाद शहर में कुछ आवारों के साथ जुआ खेलते शेखर किसी पर नाराज हो गया और उसने उसे पीटा भी। चोट खाकर वह व्यक्ति मर गया। इस पर डरकर शेखर भाग गया। लेकिन सिपाहियों को पता चला कि शेखर ने ही हत्या की है और उसका पता लगाकर उसे बन्दी बनाया। यह खबर मिलते ही पद्मनाभ शहर पहुँचा।

आखिर शेखर की सुनवाई हुई। रवीन्द्र ने शेखर की रक्षा करने के ख्याल से अदालत में इस बात की गवाही दी कि हत्या के समय शेखर उसके साथ अपने कमरे में ही था, पर शेखर के द्वारा हत्या करते समय रवीन्द्र के अलावा कई लोगों ने खुद अपनी आँखों से देखा था। इस वजह से शेखर को आजीवन कारावास का दण्ड मिला।

जल्द ही पद्मनाभ पर यह बात खुल गई कि शहर पहुँचने के बाद शेखर सभी तरह की बुरी लतों का शिकार हो गया था। इस पर पद्मनाभ ने गुस्से में आकर रवीन्द्र को डांटा–"तुम अक्षम्य अपराधी हो! मित्र द्रोही हो, समाज द्रोही हो! साथ ही विश्वासघातक भी हो! आइंदा कभी तुम मुझे अपना चेहरा मत दिखाओ। यहाँ से इसी वक्त चले जाओ।" यों डांटकर पद्मनाभ अपने गाँव चला गया।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर पूछा–"राजन, पद्मनाभ ने रवीन्द्र की निंदा क्यों की? अपने पुत्र को खोने के बाद अपने पुत्र से ज्यादा प्रिय रवीन्द्र को अपने साथ रखते वह प्रसन्न रह सकता था, मगर उसको भी अपने से क्यों दूर किया? कहीं उसके मन में दोनों बेटों के बीच भेद भाव था? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने बताया–"पद्मनाभ के मन में इस तरह का कोई भेदभाव नहीं है। वह मैत्री और जिम्मेदारी का अर्थ अच्छी तरह से जानता था। मगर रवीन्द्र इन दोनों का अर्थ समझ न पाया और उसने परम द्रोही के रूप में व्यवहार किया। अगर वह अपने मित्र का हित चाहनेवाला होता तो शेखर को गलत रास्ते पर क़दम बढ़ाते देख उसे पद्मनाभ को इसकी सूचना देनी थी। साधारण मनुष्य जनमत के अनुकूल व्यवहार करते हैं। शहर में जाने के बाद शेखर के बारे में पद्मनाभ को सही हालत दे सकनेवाला व्यक्ति रवीन्द्र अकेला ही था। ऐसी हालत में उसने केवल अपने हित की ही बात सोची और शेखर के बारे सच्ची बात उसके पिता को बताने से डर गया। साथ ही वह वास्तविकता से उसे अपरिचित ही रखा। अगर रवीन्द्र सही खबर देता तो पद्मनाभ अपने पुत्र शेखर को नियंत्रण म रखता और उसे पतन के रास्ते पर बढ़ते रोक देता। मगर रवीन्द्र ने अपना स्वार्थ ही सोचा और शेखर के पतन का रास्ता खोल दिया। उसने शेखर के द्वारा की गई चोरी व हत्या को भी छिपाने का प्रयत्न किया और इस तरह वह समाज द्रोही बना। आखिर शेखर के सदा के लिए अपने पिता से दूर होने का एक मात्र कारण रवीन्द्र ही है।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

शिला प्रतिमा

वंग देश का राजा धर्मवीर जनता की प्रशंसा पाने के ख्याल से शासन के मामलों में ज़्यादा अभिरुचि दिखाने लगा था। उसने प्रत्येक गाँव के अधिकारी को राजप्रतिनिधि का ओहदा दिया। हर साल एक बार गाँव के अधिकारियों को बुलवाकर उनका प्रतिवेदन सुना करता था।

गाँव के अधिकारी उस प्रतिवेदन में राजा की खूब तारीफ़ करते, और अपने गाँव की ज़रूरतों का उसमें उल्लेख कर सारी सुविधाएँ राजा के जरिये प्राप्त करवा लेते थे।

थोड़े दिन बाद राजा धर्मवीर के मन में यह इच्छा पैदा हुई कि स्वयं जान ले कि जनता उसके प्रति कैसी भावना रखती है। वह पहले ही हर एक गाँव में अपनी शिला प्रतिमाएँ स्थापित कर भेदियों के द्वारा यह ख़बर जान लेता था कि जनता उन प्रतिमाओं के साथ कैसा व्यवहार करती है। राजा भले ही अपना ज़्यादा यश चाहता हो, मगर उसके द्वारा जनता की भलाई ही होती रही। इस कारण हर गाँव के लोगों ने राजा की प्रतिमा के चारों ओर एक थाला बनाया और उसमें तरह तरह के फूलों के पौधे रोप दिये। उन फूलों की मालाएँ बनवाकर रोज उस प्रतिमा के कंठ में पहना देते और प्रणाम किया करते थे।

यह खबर राजा ने कई बार कई भेदियों के जरिये सुनी और देश की प्रजा का अपने प्रति यह प्यार और आदर देख तन्मय हुआ करता था।

वैसे वंग देश के सारे गाँवों की हालत अच्छी थी, मगर विक्रमपुरी नामक गाँव बड़ी असुविधाओं का शिकार बन गया था। उनमें पानी की समस्या सब से बड़ी थी।

राधारमण

इसके बारे में गाँव के अधिकारी वीरदास ने अपने प्रतिवेदन में बराबर ज़िक्र भी किया था।

राजा ने विक्रमपुरी गाँव की जनता के वास्ते नदी से गाड़ियों द्वारा पानी पहुँचाने का इंतज़ाम भी कर दिया था। मगर इसके बावजूद भी गाँववालों को समान रूप से पानी मिलता न था।

गाँव के बड़े परिवारों की ज़रूरत भर के लिए पानी पहुँचने के बाद बाक़ी परिवारों को सिर्फ़ एक एक घड़ा पानी मिल जाता था।

दूसरे साल जब वीरदास राजा को अपना प्रतिवेदन देने पहुँचा, तब उसने निवेदन किया–"महाराज, आप गाड़ियों पर बड़े प्रयास के साथ नदी का पानी हमारे गाँव में पहुँचवा तो रहे हैं लेकिन ऐसा लगता है कि इससे हमारी समस्या हल होनेवाली नहीं है। आप हमारे गाँव में जलवेधियों को भेजकर भूगर्भ में जल की खोज करवा दीजिए, तब उन जगहों में कुएँ खुदवा दीजियेगा तो हमेशा के लिए हमारे गाँव के लिए पानी का अभाव जाता रहेगा।"

वीरदास के निवेदन के मुताबिक़ राजा ने दस जलवेधियों को विक्रमपुरी में भेजा। उन लोगों ने सारे गाँव की जांच करके जान लिया कि कहीं भी पानी मिलनेवाला नहीं है। मगर फिर से जांचने के बाद उनकी नज़र गाँव के बीच में स्थित राजा
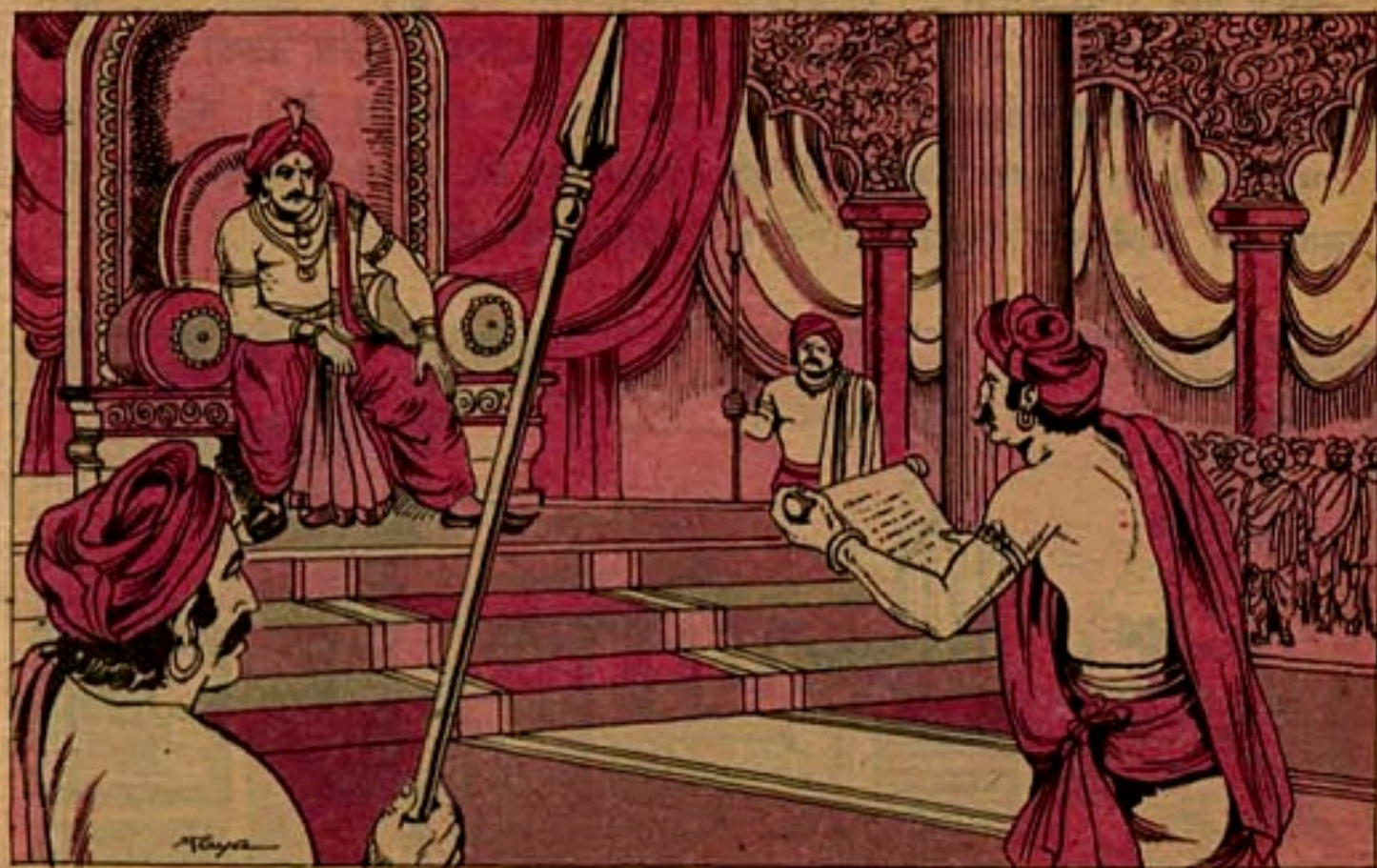
की शिला प्रतिमा के नीचे की जमीन पर पड़ी।

जलवेधियों ने वीरदास को बताया– "महाशय, इस प्रदेश में और कहीं भी पानी के मिलने की बिलकुल गुंजाइश नहीं है। मगर राजा की शिला-प्रतिमा की जगह खोदने पर पानी जरूर मिल सकता है।" इसके बाद वीरदास ने राजा को जलवेधियों का समाचार सुनाया और शिला प्रतिमा की जगह कुआँ खोदने की अनुमति माँगी।

राजा यह बात सुनकर क्रोध में आ गया, बोला–"यह बात कहने की तुम हिम्मत रखते हो?" यों डांटकर राजा ने वीरदास को अपने पद से हटाया और उन दस जलवेधियों को कारागार में भिजवा दिया।

इसके बाद राजा धर्मवीर ने विक्रमपुरी में पहले से दुगुना जल गाड़ियों में भिजवाने का आदेश दे दिया।

थोड़े दिन बाद राजा विक्रमपुरी की जनता का अपने प्रति विचार जानने के ख्याल से वेष बदलकर उस गाँव में पहुँचा। राजा ने देखा, शिला प्रतिमा पर धूल जमी हुई है, उसके चारों तरफ़ थाले में कंटीले पौधे उगे हुए हैं। गाँववाले उस प्रतिमा के प्रति उपेक्षा दिखा रहे थे। राजा के प्रति उनकी श्रद्धा घट गई थी। जनता को तो राजा से भी पानी प्रधान था।

तब जाकर राजा धर्मवीर के मन में ज्ञानोदय हुआ। उसने जलवेधियों को कारागार से मुक्त कराया। उन्हें फिर विक्रमपुरी में भेजकर अपनी प्रतिमा की जगह एक बहुत बड़ा कुआँ खुदवाया और वीरदास को फिर से अपने पद पर नियुक्त किया। इसके बाद राजा फिर वेष बदलकर विक्रमपुरी को देखने पहुँचा, उस वक़्त देखा कि कुएँ के समीप एक सुंदर फूलों के बगीचे के बीच उसकी संगमरमर की प्रतिमा स्थापित है। वह प्रतिमा विक्रमपुरी की जनता ने चन्दा वसूल कर स्थापित कर ली थी।

सफ़र का साथी

रामनिवास की माँ साठ वर्ष की बूढ़ी हो चली थी। एक बार उसके मन में अपनी बड़ी बेटी को देखने की इच्छा हुई। उसने कई बार अपने बेटे रामनिवास से पूछा—"बेटा, बहुत दिन हो गये, तुम मुझे तुम्हारी बहन के घर ले जाना चाहते थे, पर टालते जा रहे हो, अब तीन-चार दिन की फ़ुरसत तो निकालो, देख आयेंगे।" मगर रामनिवास को काम से फ़ुरसत नहीं मिलती थी और न वह अपनी माँ को अकेले उतनी दूर भेजना चाहता था। पर अचानक पड़ोसी युवक राजेश को उसी गाँव में जाने का काम आ पड़ा। रामनिवास ने अपनी माँ को राजेश के साथ भेजने का इंतज़ाम किया।

रामनिवास की माँ ने अपने कपड़े-लत्ते एक थैली में रख लिया। रामनिवास को सुंघनी लेने की आदत थी। वह खुद अपने वास्ते बढ़िया सुंघनी तैयार कर लेता था। उसके बहनोई को भी सुंघनी लेने की आदत थी, इसलिए उसके वास्ते एक डिबिया में सुंघनी भरकर रामनिवास ने अपनी माँ के हाथ दिया। बूढ़ी ने बच्चों के वास्ते थोड़ी सी मिठाइयाँ भी बनवाकर पोटली बांध ली। रामनिवास ने बूढ़ी के हाथ थोड़े से रुपये भी दिये।

राजेश को लगा कि बूढ़ी को अपने साथ लेकर सफ़र करना मुश्किल है; फिर भी वह इनकार न कर पाया, उसने मान लिया था। गाँव की सीमा के पार करते ही राजेश ने बूढ़ी से कहा—"काकी, तुम्हारे हाथ जो रुपये हैं, मेरे हाथ दे दो, मैं हिफ़ाज़त से रखूंगा। गाँव पहुँचने पर लौटा दूंगा।" बूढ़ी ने रुपये राजेश के हाथ दे दिये; उसने वे रुपये अपनी कमर में खोंस लिये।

मीना श्रीवास्तव

दुपहर तक वे दोनों किसी गाँव में पहुँचे। अचानक जोर की वर्षा हुई। गाँव के बाहर एक खपरैल का मकान दिखाई दिया, राजेश ने जाकर जोर से दरवाजे पर धक्के दिये। खिड़की में से झांककर एक युवती ने नाराज़ होकर पूछा—"तुम कौन हो? क्या चाहते हो?"

"बरसा जोर पकड़ने लगी है। तुम्हारे घर थोड़ी देर के लिए आश्रय चाहिए।" राजेश ने कहा।
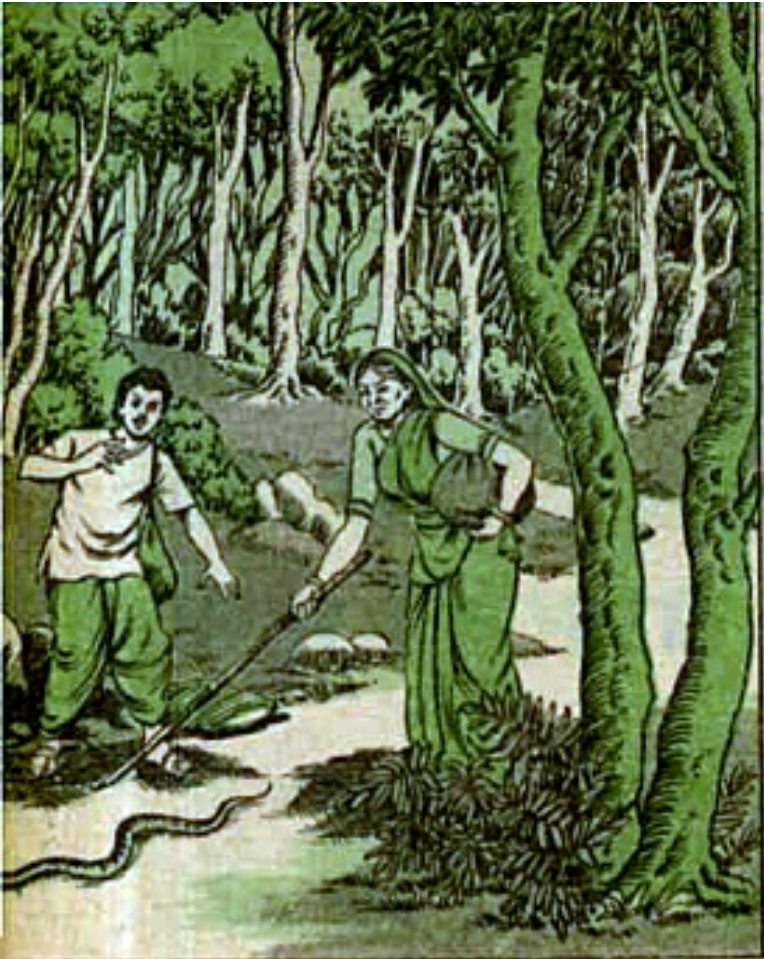
"नहीं, हमारे घर में इस वक़्त कोई मर्द नहीं है और कहीं चले जाओ।" उस औरत ने साफ़ कह दिया। उस वक़्त बूढ़ी ने खिड़की के सामने जाकर नरम शब्दों में कहा—"बेटी, पानी में भीग रहे हैं। मैं तुम्हारी माता के समान हूँ। ये लड़का तुम्हारे भाई के समान है। तुम डरो मत, दर्वाजा खोल दो।"

बूढ़ी को देखते ही घरवाली ने आकर दर्वाजे खोले। बातों के सिलसिले में यह स्पष्ट हो गया कि उनके बीच दूर का रिश्ता भी है। फिर क्या था, बूढ़ी के मना करते रहने पर भी चूल्हा जलाकर उस औरत ने रसोई बनाई और दोनों को गरम-गरम खाना खिलाया।

थोड़ी देर बाद वर्षा थम गई।

"बेटी, अब हम चलते हैं। बड़ी दूर का सफ़र है।" यों कहकर बूढ़ी जाने को तैयार हो गई, मगर उस औरत ने लौटती यात्रा में एक जून उसके घर ठहरने का वादा लेकर तब जाने दिया। रास्ते में बूढ़ी ने राजेश को समझाया—"मीठी बातों से हम लोग दूसरों को अपने निकट के बना सकते हैं।"

वे लोग एक पगडंडी के रास्ते जब चल रहे थे, तब रास्ते में एक काला नाग लेटा हुआ दिखाई दिया। उसे देख राजेश चिल्लाते तालियाँ बजाने लगा। फिर भी साँप अपनी जगह से हिला तक नहीं।

बूढ़ी ने लाठी से जमीन पर दे मारा। साँप ने सर उठाकर देखा और धीरे से बाजू की झाड़ियों में सरककर चला गया।

"बेटा, साँप के कान नहीं होते! जमीन के हिलने पर वह भी हिलता है।" बूढ़ी ने राजेश को समझाया।

संध्या के समय वे लोग एक पहाड़ी तलहटी से होकर यात्रा कर रहे थे। तब कोई अचानक उनके सामने आ कूद पड़ा। चाकू दिखाकर राजेश को धमकाया– "तुम्हारे हाथ में जो रुपये हैं, दे दो।"

राजेश एक दम कांप उठा। अपनी कमर को टटोलते रुपये निकालने को हुआ, इसे भांपकर बूढ़ी बोली–"बेटा, थोड़ा रुक जाओ। इस कमबख्त धन के वास्ते तुम उसकी जान क्यों लेते हो? सारे रुपये मेरे पास हैं।" यों कहते उसने डिबिया निकाल ली और सुंघनी लेकर डाकू की आँखों में छिड़क दिया। डाकू चीखकर चाकू गिरा करके दोनों हाथों से अपनी आँखें मलने लगा।

बूढ़ी ने चाकू हाथ में लेकर राजेश को इशारा करते डांटा–"अरे राजेश! बेचारे ने पैसे के लोभ में पड़कर हमें धमकी दी है। उसको मार डालने से हमारा बनता ही क्या है? बेचारे को छोड़ दो।"

डाकू डरकर वहाँ से भाग गया।

बूढ़ी ने इस बार भी समझाया–"बेटा, विपदा के समय समझ-बूझ से काम लेना चाहिए।" ये बातें सुन राजेश ने बूढ़ी के सामने अपना सिर झुका लिया।

संध्या के समय वे लोग एक छोटे शहर में पहुँचे। उन्हें और दूर की यात्रा करनी थी।

"काकी! हमारे गाँव पहुँचते-पहुँचते आधी रात हो जाएगी। मुझे तो बड़ी भूख लगी है। मैं किसी दूकान में जाकर कोई चीज खा लूँगा और तुम्हारे वास्ते फल लेते आऊँगा।" यों समझाकर राजेश कहीं चला गया। इस पर बूढ़ी जाकर एक मकान के चबूतरे पर जा बैठी। लेकिन राजेश बड़ी देर तक न लौटा। बूढ़ी उठ खड़ी हुई और दूकान की ओर चल पड़ी।

उस दूकान का मालिक राजेश को डाँट रहा था–"तुमने भर पेट नाश्ता कर लिया, अब कहते हो, तुम्हारे रुपयों का बटुआ किसी ने हड़प लिया है। तुमने पहले ही क्यों नहीं देखा? ऐसे बहुतों को हमने देखा है। तुम इसका दाम न चुकाओगे तो तुम से मैं बोरे ढुआऊँगा, समझे?"

बूढ़ी ने असली बात भांप ली। पैसे निकालकर राजेश के नाश्ते का दाम चुकाया, तब बोली–"चलो बेटा!"

राह में चलते वक़्त राजेश ने बूढ़ी से पूछा–"काकी, ऐसा लगता है कि मेरे रुपयों का बटुआ कहीं खो गया है। तुमने तो अपने सारे रुपये मेरे हाथ दिये, ऐसी हालत में तुम्हारे पास और रुपये कहाँ से आ गये?" राजेश ने पूछा।

"बेटा, सारे रुपये कहीं एक ही जगह रख लेते हैं? तीन-चार जगह छिपाना चाहिए, वरना हमारी क्या हालत होगी?" बूढ़ी ने समझाया।

रामनिवास ने सोचा कि अपनी बेटी के गाँव जाकर उसकी माँ कम से कम दो-तीन हफ़्ते वहाँ बिताएगी, मगर वह बहुत जल्द ही लौट आई। इसे देख रामनिवास ने पूछा–"माँ, तुम इतनी जल्दी कैसे आ गई? चार-पाँच दिन और रह जातीं?"

"क्या करूँ बेटा? बेचारा राजेश घर लौटते मुझे भी साथ चलने को जल्दी मचाने लगा। उसके गिड़गिड़ाते देख मैं बेटी के घर ज्यादा दिन बिता न पाई। आख़िर मैंने बेटी को देख लिया है न?" बूढ़ी ने अपने बेटे को समझाया।

अत्रि

ऋषियों में देवर्षि, ब्रह्मर्षि, राजर्षि, विप्रर्षि आदि कई तरह के हैं। दानव ऋषि भी हैं। उनमें से अत्रि ब्रह्मर्षि वर्ग के हैं। ये ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं।

अत्रि की पत्नी अनसूया है जो बड़ी तपस्विनी है। एक बार ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर अपने अपने वाहनों पर अत्रि के आश्रम से होते हुए मेरु पर्वत की ओर जा रहे थे, उस वक़्त उनके वाहन आश्रम के समीप में अचानक रुक गये, इसके बाद उन्हें दूसरे रास्ते से जाना पड़ा था।

एक बार पृथ्वी पर भयंकर अकाल पड़ा, उस वक़्त अनसूया ने अपनी शक्ति के बल पर गंगा को पृथ्वी पर बहाकर अकाल को दूर किया था।

एक बार कौशिक नामक व्यक्ति को किसी ने शाप दिया कि सवेरा होते ही वह मर जाएगा। कौशिक की पत्नी अनसूया की सखी थी। इस वजह से कौशिक की पत्नी विधवा न बने, इस विचार से अनसूया ने एक रात को दस रात्रियों के बराबर कर दिया था।

एक बार अत्रि पुत्र-संतान की कामना से तपस्या कर रहे थे, तब ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर एक साथ प्रत्यक्ष हुए। इस पर अत्रि ने उनसे पूछा–"मैं आप में से किन्हीं एक ही के वास्ते तप कर रहा था, आप तीनों क्यों आये?"

देवताओं ने बताया–"हम तीनों हमारे अंशोंवाले तीन पुत्र तुम्हें प्रदान करेंगे।"

इसके बाद अत्रि दंपति को ब्रह्मा के अंश से सोम, विष्णु के अंश से दत्तात्रेय और शिव के अंश से दुर्वास पैदा हुए। मगर कहा जाता है कि अत्रि के इन तीनों के अलावा और ज्यादा संतान है। अत्रि की संतति के लोग कालांतर में

आत्रेय कहलाते हैं। अत्रि ऋषि तो एक कुलपति हैं।

श्राद्ध की विधि का सर्व प्रथम विधान करनेवाले व्यक्ति अत्रि हैं। अत्रि ने निमि को बताया कि पिंड प्रदान पिता, दादा और पर दादा को करना चाहिए, पर हर मास किया जानेवाला श्राद्ध पिता मात्र के लिए करना है।

सब से पहले अत्रि ने ही राजा को देवांश संभूत बताया है।

ब्रह्मावर्त देश में पृथु चक्रवर्ती ने निन्यानवे यज्ञ किये। इसके बाद सरस्वती नदी के किनारे एक और अश्वमेध यज्ञ करने लगे, तब इन्द्र ईर्ष्या से प्रेरित होकर यज्ञाश्व को उठा ले गये। चक्रवर्ती पृथु ने जब ये यज्ञ किये थे, उस वक़्त अत्रि भी वहाँ पर थे।

इसके बाद अत्रि जब अपने परिवार को छोड़ तपस्या करने जा रहे थे, तब उनकी पत्नी ने उनसे कहा–"आप अपने परिवार के पालन-पोषण का कोई मार्ग बताये बिना तप करने नहीं जा सकते।" पृथ्वी का भार ढोनेवाला व्यक्ति क्षत्रिय है, इसलिए अत्रि ने पृथु चक्रवर्ती के पास जाकर उनकी प्रशंसा की–"आप में देवताओं का अंश है, आप इंद्र के समान हैं।"

इस पर वहाँ पर उपस्थित गौतम ने आपत्ति उठाई। लेकिन सनत्कुमार ने उन दोनों मुनियों का तर्क सुनकर अपना फ़ैसला सुनाया–"अत्रि की प्रशंसा समुचित है।"

तब पृथु चक्रवर्ती ने अत्रि को अपार संपत्ति दी। पृथु के पिता वेन राजा दुष्ट स्वभाव के थे, इस कारण जनता ने उसको "पागल कुत्ते" की तरह पीट पीटकर मार डाला था। ऐसी हालत में पृथु को अत्रि और सनत्कुमार के द्वारा देवांश संभूत कहलाना आनंद का ही विषय था।

महामुनि अत्रि ने ही सब से पहले यह बताया था कि जो व्यक्ति सोना देता है, वह समस्त प्रकार की इच्छाओं की पूर्ति करनेवाला होता है। वे कुबेर के सात गुरुओं में से एक थे।

तुलसी का जन्म-वृत्तांत

एक बार इंद्र शिवजी को देखने कैलास में गये। उस वक्त एक शिला पर निश्चल बैठे हुए व्यक्ति को देख इंद्र ने शिवजी के पास जाने का रास्ता पूछा। उस व्यक्ति ने कोई जवाब नहीं दिया। इस पर कुपित होकर इन्द्र ने अपने वज्रायुध से उस व्यक्ति के सिर पर दे मारा।

दूसरे ही क्षण उस व्यक्ति के सिर पर से भयंकर अग्नि ज्वालाएँ फूटीं। क्यों कि वह व्यक्ति कोई और न था, साक्षात् शिवजी ही थे। तब इन्द्र ने शिवजी से क्षमा याचना की और उन ज्वालाओं के द्वारा भस्म होने से अपने को बचा लिया था।

शिवजी के सिर पर से जो अग्नि ज्वालाएँ उठी थीं, वे आसमान में उठीं और चारों तरफ़ फैल गईं। आखिर वह ज्वाला दूर समुद्र में जा गिरी। समुद्र में गिरने के बाद वह ज्वाला एक छोटे से शिशु के रूप में बदल गई।

क्रोध की अग्नि से पैदा हुआ वह शिशु महान भयंकर व्यक्ति के रूप में बन गया। समुद्र ने उस शिशु को ब्रह्मा के हाथ सौंप दिया, उसे नियंत्रण में रखना ब्रह्मा के लिए भी संभव न हुआ। वही शिशु जलंधर नामक शक्तिशाली राक्षस है।

कालक्रम में वही जलंधर राक्षसों का राजा बन बैठा। उसने पृथ्वी पर के सभी राजाओं से युद्ध करके उन सब को हरा दिया। इसके बाद उसने देवताओं को भी हराने का अपने मन में दृढ़ निश्चय कर लिया।

जलंधर राक्षस सेना को लेकर इन्द्र की राजधानी अमरावती पर हमला कर बैठा। इंद्र के प्रति शिवजी के मन में जो क्रोध था, वह आख़िर इस रूप में इंद्र पर प्रकट हुआ। उस समय सारे देवता भी असहाय बन गये।

उस युद्ध में इंद्र और देवगण भी हार गये। जलंधर ने अमरावती पर क़ब्ज़ा कर लिया। उस समय लाचार होकर इंद्र कैलास में गये। उन्होंने शिवजी से प्रार्थना की कि जलंधर के द्वारा उनकी रक्षा करने की कृपा करें।

इस पर शिवजी ने जलंधर को डांट दिया कि वह भविष्य में ऐसे दुष्ट कार्य न करे, मगर कोई फ़ायदा न रहा। अंत में शिवजी को खुद जलंधर का संहार करना पड़ा। आश्चर्य की बात यह थी कि शिवजी जलंधर की कोई हानि न कर पाये।

जलंधर की रक्षा करनेवाली महा शक्ति उसकी पत्नी बृंदा के द्वारा प्रति दिन की जानेवाली विष्णु-पूजा थी। बृंदा जब तक अपने पति के हित की कामना से ध्यान करती रहती है, तब तक उसकी कोई हानि नहीं होती।

देवताओं ने विष्णु से प्रार्थना की कि वे उन लोगों की मदद करे। विष्णु तो विपदा में फंस गये। बृंदा की भक्ति ही जलंधर के लिए रक्षा का कवच बनी थी। मगर किसी भी हालत में जलंधर को मरना जरूरी था।

इस पर विष्णु जलंधर के रूप में बृंदा के समीप गये। बृंदा ने यह सोचकर अपना ध्यान बंद किया कि उसका पति विजयी होकर लौट रहा है। उसी वक्त मौक़ा देख शिवजी ने जलंधर का वध कर दिया।
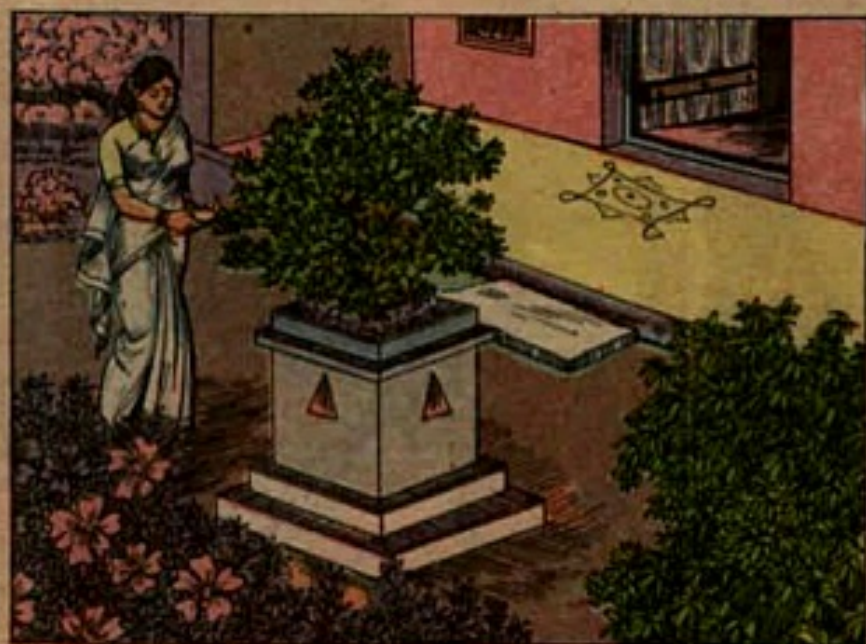
अंत में बृंदा ने उस धोखे को समझ लिया और अपने पति की चिता में कूदकर सहगमन किया। उसके चिता-भस्म में से तुलसी का पौधा पैदा हुआ जो विष्णु के लिए अत्यंत प्रिय पात्र बना। इसीलिए आज भी सब लोग तुलसी की आराधना करके तुलसी पत्रों के द्वारा विष्णु की पूजा करते हैं।

प्रह्लाद

हिरण्य कश्यप जब ब्रह्मा के प्रति तपस्या करने को हुआ, उस वक़्त उसकी पत्नी लीलावती गर्भवती थी। उस वक़्त देवता और दानवों के बीच भयंकर युद्ध छिड़ा, दानवों के पक्ष में शक्तिशाली नेता न था, इस कारण वे लोग उस युद्ध में हार गये।

दानवों पर विजय पाने के बाद इंद्र को लीलावती बंदी के रूप में प्राप्त हुई। नारद मुनि ने इंद्र को समझाया कि लीलावती पतिव्रता है और उसको मुक्त करने की कृपा करें।

साथ ही नारद ने इंद्र को समझाया– "लीलावती के गर्भ से पैदा होनेवाला शिशु महान भक्त होगा। इसलिए उसका वध नहीं करना चाहिए।" यों इंद्र को मनवाकर नारद लीलावती को अपने आश्रम में ले गये। उसे तत्वज्ञान का उपदेश दिया। नारद ने जो तत्वोपदेश दिया, उसे लीलावती के गर्भ में रहनेवाले प्रह्लाद ने सुना। इसी कारण से वह जन्म के साथ ही विष्णु भक्त बना।

इसके बाद हिरण्य कश्यप को ब्रह्मा प्रत्यक्ष हुए। हिरण्य कश्यप ने ब्रह्मा से यह वर प्राप्त किया कि किसी भी हालत में किसी के द्वारा उसकी मृत्यु न हो। फिर लौटकर नारद के आश्रम से अपनी पत्नी और पुत्र को ले गया। प्रह्लाद को दानव गुरु शुक्राचार्य के पुत्र चण्डामार्कों के पास पढ़ने के लिए भेजा।

प्रह्लाद ने थोड़े ही समय में सभी शास्त्रों का अध्ययन किया, और अवकाश के क्षणों में अपने साथियों को वेदांत और विष्णु भक्ति समझाने लगा।

चण्डामार्कों ने कई तरह से समझाया कि ऐसा न करे, पर उसने न माना।

एक बार हिरण्य कश्यप ने अपने पुत्र की विद्या की परीक्षा लेनी चाही, उसने प्रह्लाद को बुला भेजा, अपनी जांघ पर बिठाकर प्यार किया और कोई कविता सुनाने को कहा।

इस पर प्रह्लाद ने बड़ी भक्ति भावना से विष्णु की स्तुति की, तब हिरण्य कश्यप ने प्रह्लाद को समझाया–"बेटा! विष्णु तो देवताओं के देव हैं, हमारे शत्रु हैं, इस वक़्त में ही तीनों लोकों का अधिपति हूँ। इसलिए तुम्हें विष्णु की कभी स्तुति नहीं करनी चाहिए।"

फिर भी प्रह्लाद ने अपनी विष्णु भक्ति नहीं छोड़ी। प्रह्लाद के पिता और गुरु भी उसके मन को बदल नहीं पाये। हिरण्य कश्यप ने सोचा कि प्रह्लाद उसके वंश पर कलंक लगानेवाला है। यों विचार कर उसे मार डालने के कई प्रयत्न किये। पहाड़ों पर से उसे नीचे गिरवा दिया, सर्पों से डसवाया, हाथियों से कुचलवा दिया, पर कोई फ़ायदा न रहा। हिरण्य कश्यप ने साम, दाम उपायों के द्वारा जो प्रयत्न किये, वे सब बेकार साबित हुए। प्रह्लाद न मरा और न उसने विष्णु की स्तुति करना बंद किया।

हिरण्य कश्यप ने सोचा कि प्रह्लाद के देखते हरि का संहार करके उसके सामने अपना बड़प्पन साबित करे, इस ख़्याल से उसने अपने पुत्र से पूछा–"हरि कहाँ रहता है?"

"वे तो सर्वत्र निवास करते हैं।" प्रह्लाद ने उत्तर दिया।

"क्या इस स्तम्भ में भी होते हैं?" यों कहते हिरण्य कश्यप ने अपने गदे से उस खंभे को तोड़ डाला। उसमें से नरसिंहमूर्ति ने प्रत्यक्ष होकर ब्रह्मा के वरों की हानि हुए बिना दूसरे उपाय से हिरण्य कश्यप का पेट चीरकर उसे मार डाला।

प्राचीन काल में नेपाल देश के समीप में शाक्य राज्य था। शाक्य राज्य की राजधानी कपिलवस्तु नगर था। ये शाक्य उन दिनों में कोसल देश के राजा प्रसेनजित के अधीन थे। शाक्य वंशी लोग सामंत होते हुए भी अपने वंश पर अभिमान करते थ, इस कारण वे अन्य राजवंशों के साथ वैवाहिक संबंध नहीं जोड़ते थे।

बुद्ध भगवान के प्रति कोसल राजा अपार भक्ति रखते थे। बुद्ध शाक्य वंशी थे, इस कारण भगवान के साथ निकट संबंध रखने के ख्याल से प्रसेनजित ने शाक्य वंशी नारी को पट्टमहिषी बनाने का निश्चय कर लिया।

अपने निर्णय को दूतों के द्वारा शाक्य वंशियों को सुनाकर कन्यादान करने का अनुरोध किया। अब शाक्यों के सामने बड़ी जटिल समस्या पैदा हो गई। यदि वे कोसल राजा की इच्छा की पूर्ति न करेंगे तो उनका सर्वनाश निश्चित है। पूर्ति करना चाहे तो वह उनकी परंपरा के विरुद्ध है। इस पर शाक्यवंशियों ने इस बात का निर्णय करने के लिए सभा बुलाई, चर्चा हुई, तर्क-वितर्क हुए।

उस अवसर पर महानाम नामक व्यक्ति ने समझाया-"आप लोग चिंता न करें। मेरी पुत्री वासव क्षत्रिय दासी से उत्पन्न कन्या है। उसका नाम लक्षणवती है। हम उसे शाक्य युवती बताकर कोसल राजा के पास भेज देंगे।" इस सुझाव को सब ने मान लिया। सब यह सोचकर प्रसन्न हुए कि आखिर बला टल गई है।

इसके बाद महानाम ने कोसल राज्य के दूतों को बुलवाकर कहा-"हम कन्यादान कर रहे हैं। तुम लोग इस कन्या को

२५ साल पहले की चन्दामामा की कहानी

अपने देश में ले जा सकते हो।" मगर दूत जानते थे कि वंश की मर्यादा को लेकर शाक्यवंशी अत्यंत हठी हैं। अब शाक्यों ने बड़ी सरलता से कोसल राजा की शर्त को मान लिया, इस पर दूतों के मन में संदेह पैदा हुआ। उन लोगों ने सोचा-"यह कन्या शाक्य वंशी न होगी! ये लोग उन्हें धोखा दे रहे हैं।"

यों विचार कर दूतों ने कहा-"अच्छी बात है; यदि यह कन्या आप लोगों के साथ एक ही थाल में खाना खाएगी तो हम इसे अपने साथ ले जायेंगे, वरना नहीं।" दूतों की यह परीक्षा शाक्यों के लिए एक उलझन बन गई। उन लोगों ने फिर से इस समस्या पर विचार किया। किसी न किसी प्रकार दूतों को धोखा देकर भेजने का निश्चय करके उन लोगों ने एक उपाय किया।

उस दिन महानाम खाने बैठे। थोड़ी दूर पर दूत भी बैठ गये। महानाम ने एक दासी को बुलाकर आदेश दिया-"तुम लोग मेरी बेटी को ले आओ। मेरे साथ वह भोजन करेगी।" कुछ ही मिनटों में वासव आकर अपने पिता के थाल के आगे बैठ गई। महानाम ने मुट्ठी भर खाना मुँह में रख लिया। वासव क्षत्रिय ने भी उस थाल में हाथ रखा। इसके बाद महानाम दुबारा मुट्ठी में खाना लेने को हुआ।

इतने में एक सेवक ने प्रवेश करके एक चिट्ठी देकर कहा-"महाराज! अवंती के राजा ने यह पत्र भेजा है। वे इसी समय इस पत्र का उत्तर माँगते हैं।"

फिर क्या था, महानाम का दायाँ हाथ थाल में ही रह गया। बायें हाथ से पत्र लेकर पढ़ते हुए बोले-"बेटी, तुम खाना खाती रहो।" वासव खाने लगी। राजा वह चिट्ठी पढ़ते रहे। वासव ने इस बीच सारा खाना खा लिया, तब बाप और बेटी ने उठकर हाथ-मुँह धो लिये।

मगर कोसल राजा के दूत इस उपाय के मर्म को समझ न पाये। उन लोगों ने

यक़ीन किया कि वासव महानाम की सगी पुत्री है। शाक्य लोग बहुत खुश हुए। अत्यंत वैभवपूर्वक सब ने वासव को कोसल देश भेज दिया। कोसल राजा ने प्रसन्न होकर वासव को अपनी पट्ट महिषी बनाया। थोड़े समय बाद वासव क्षत्रिय के एक सुंदर लड़का हुआ। उसका नामकरण विरूढ़ किया गया।

विरूढ़ पलकर बड़ा हो गया। एक दिन उसने अपनी माँ के पास जाकर पूछा–"माँ, सभी बच्चे अपने अपने नाना के घर जा रहे हैं। मैं भी अपने नाना के घर हो आऊँगा।" यह खबर सुनते ही वासव को लगा कि उसके सर पर गाज गिर गई हो। उसने अनेक प्रकार से समझाया, पर विरूढ़ का हठ बढ़ता ही गया।

अंत में वासव ने अपने पुत्र को भेजने का निर्णय किया और गुप्त रूप से अपने पिता के पास यों चिट्ठी लिख भेजी– "पिताजी, आप का नाती कपिलवस्तु में आ रहा है। उससे यह रहस्य गुप्त ही रखियेगा।"

विरूढ़ के आने का समाचार मिलते ही नगर के सभी शाक्यवंशियों ने अपने अपने बच्चों को निकट के गाँवों में भेज दिया। क्यों कि उनका यह हठ था कि दासी पुत्र

विरूढ़ को कोई शाक्यवंशी लड़का प्रणाम न करे।

विरूढ़ कपिलवस्तु में पहुँचा। उसका स्वागत करने के संबंध में विचार करने के लिए शाक्यों ने सभा बुलाई। वहाँ पर राजकुमार का सब को परिचय कराया गया। विरूढ़ ने प्रत्येक को प्रणाम किया, मगर शाक्यों में से किसी ने उसे प्रति नमस्कार नहीं किया। विरूढ़ को यह आचार कुछ विचित्र ही प्रतीत हुआ। शाक्यों ने बड़ी सावधानी से विरूढ़ के ठहरने व भोजन आदि का प्रबंध कर रखा था।

थोड़े दिन वहाँ बिताकर विरूढ़ फिर अपने नगर के लिए रवाना हुआ। उसके

सैनिकों में से एक अपने निवास में कोई वस्तु भूल गया था, इसलिए वह थोड़ी देर बाद अचानक लौट आया। वहाँ पर उसने एक अद्भुत दृश्य देखा। वह यह था–विरूढ़ जहाँ बैठकर चला गया था, उस स्थान को एक दासी दूध से धोकर साफ़ करते हुए कुछ गुनगुना रही थी।

सैनिक ने उस दासी के जरिये असली बात जान ली। वह बात उसने अपने सैनिकों को बताई। फिर क्या था, सैनिकों में कोलाहल मच गया। आखिर यह खबर विरूढ़ के कानों में पड़ी। वह क्रोध से भर उठा। उसने उसी वक़्त यह प्रतिज्ञा की–"मैं जिस स्थान पर बैठा हुआ था, उसे शाक्यों ने दूध से धोकर साफ़ किया। मगर मैं राजा बनकर उस स्थान को शाक्यों के कंठों के रक्त से धो डालूंगा। तभी वह स्थान पवित्र होगा..."

विरूढ़ के कोसल पहुँचने पर यह सारा षड़यंत्र प्रसेनजित को मालूम हुआ। वह एक दम नाराज़ हो गये। मगर उसने अपने पुत्र को समझाया कि वह शाक्यों की कोई हानि न करे। क्यों कि उनका विचार था कि ऐसा करने पर उनके गुरुदेव बुद्ध के प्रति अपचार होगा।

मगर विरूढ़ ने अपने पिता का विरोध किया। वह कोसल राज्य के सिंहासन पर बैठ गया। गद्दी पर बैठते ही उसने सर्व प्रथम शाक्यवंश का नाश करने का संकल्प किया। विरूढ़ की माँ वासव ने आँसू भरते हुए मिन्नत की कि वह ऐसा न करे, लेकिन विरूढ़ का मन बदले की भावना से भर उठा। इसके बाद विरूढ़ ने एक बड़ी सेना के साथ शाक्यों का सामना किया। शाक्य विरूढ़ के सामने ठहर न पाये। विरूढ़ ने बड़ी निर्दयता के साथ सभी शाक्यों का वध करके खून बहाया।

उस रक्त से विरूढ़ ने उस स्थान को धो डाला जिस पर वह इसके पूर्व बैठा था। इस प्रकार विरूढ़ ने अपने अपमान का बदला लिया। इस प्रकार शाक्य वंश और शाक्य राज्य का सर्वनाश हो गया।

अच्छा सबक

दिनेश साहू नामक अमीर के यहाँ कोई भी व्यक्ति नौकरी करने को तैयार नहीं होता था, क्यों कि वह कोई न कोई बहाना बनाकर तनख़्वाह देने से कतराता था। एक बार भीमशंकर दिनेश के यहाँ नौकरी पर लग गया। साहू साहब ने भीमशंकर के सामने यह शर्त रखी कि उसके आदेश का हर काम भीमशंकर को करना होगा, वरना उसे तनख़्वाह न मिलेगी। भीमशंकर ने मान लिया। एक महीने के बाद भीमशंकर ने अपनी तनख़्वाह माँगी।

"सुनो, तुम यह काम कर दो, तुम्हारी तनख़्वाह दे देता हूँ।" यों समझाकर साहू दो गिलास भीमशंकर के हाथ में देकर बोला–"तुम इस छोटे गिलास के अन्दर बड़े गिलास को रख दो।" भीमशंकर ने सोचा कि यह तो तनख़्वाह न देने का बहाना है। उसने बड़े गिलास को फोडकर उसके टुकड़े छोटे गिलास में भरकर अपनी तनख़्वाह माँगी।

फिर क्या था, साहू ने भीमशंकर को तनख़्वाह न दी, उल्टे गिलास की क़ीमत माँगी। भीमशंकर ने न्यायाधीश के पास जाकर फ़रियाद की।

"सुनो, साहूजी! तुमने तो भीमशंकर से यह नहीं कहा था कि बड़े गिलास को फोड़े बिना ही छोटे गिलास में रख दो। तुमने जैसा काम बताया, वह भीमशंकर ने किया।" यों समझाकर न्यायाधीश ने भीमशंकर को उसकी तनख़्वाह दिला दी।

वही यह है!

आनंद को आवारागर्दी करते देख उसके पिता ने एक दिन उसे डांटा। इस पर आनंद उसी दिन रात को घर से थोड़े रुपये चुराकर भाग गया। घूमते-घामते आखिर वह काशी नगर में पहुँचा।

काशी नगर के विचित्र दृश्य देखते जब वह एक गली के नुक्कड पर पहुँचा, तब वहाँ पर एक रास्ते के किनारे अंगोछा बिछाकर बैठा हुआ एक मांत्रिक दिखाई दिया। आनंद को उसकी ओर विचित्र ढंग से देखते भांपकर मांत्रिक ने मुस्कुराकर कहा—"छोटे बाबू, बताओ, क्या तुम कहीं दक्षिण देश से तो नहीं आये हो? मेरी मंत्र-विद्याएँ देखना चाहोगे?" इन शब्दों के साथ उसने एक छोटी सी करामात करके दिखाई।

आनंद ने चकित हो अपना आश्चर्य प्रकट किया।

"अगर तुम मुझे पाँच रुपये दोगे तो इसके बदले में मैं तुम्हें यह विद्या सिखलाऊँगा।" मांत्रिक ने कहा।

आनंद को लगा कि अगर वह यह विद्या सीखेगा तो सभी लोग उसे योग्य व्यक्ति के रूप में स्वीकार करेंगे। उसने उसी वक़्त मांत्रिक को पाँच रुपये देकर उसका रहस्य जान लिया। उसे लगा कि ऐसी विद्या की जानकारी है तो दूसरों से दाँव लगवाकर बहुत सारा धन कमाया जा सकता है।

दूसरे दिन आनंद जब उसी रास्ते से गुजरने लगा तब उसने देखा कि मांत्रिक अपने चारों तरफ़ इकट्ठे हुए लोगों को कोई दूसरी विद्या दिखला रहा है। सब लोगों के चले जाने पर आनंद ने मांत्रिक के हाथ दस रुपये दिये और यह नई विद्या भी सीख ली।

महेश कौल

इसी प्रकार आनंद ने मांत्रिक को लगभग सौ रुपये देकर कई विद्याएँ सीख लीं। इस बीच आनंद के गाँववाले उधर से निकले और वे उसे समझा-बुझाकर अपने घर ले गये।

घर पहुँचने पर आनंद ने सोचा कि उसे गाँववालों के सामने यह साबित करके दिखाना है कि वह भी एक योग्य आदमी बन चुका है। इस ख्याल से अपनी मंत्र विद्या की सारी सामग्री लेकर वह चौपाल के पास पहुँचा, सब को ये सारी विद्याएँ दिखाकर चुनौती दी कि अगर कोई भी आदमी उसकी ये विद्याएँ करके दिखला देगा तो वह उसे पचास रुपये देगा, अगर कोई प्रयत्न करके हार जाएगा तो उन्हें उसे सिर्फ़ पाँच रुपये देना होगा। इस पर एक-दो व्यक्ति यह प्रयत्न करके हार गये और पाँच पाँच रुपये देकर चले गये। इसके बाद किसी ने भी ऐसा प्रयत्न करने का साहस नहीं किया। जब-तब दूसरे गाँव के लोग आकर हार जाते और पाँच रुपये देकर चले जाते थे।

इस पर आनंद का हौसला बढ़ गया। उसने गाँववालों को चुनौती दी कि जो लोग ये करामतें करेंगे उन्हें वह एक सौ रुपये देगा, मगर कोशिश करके जो हार जाएगा, उसे सिर्फ़ पाँच रुपये दण्ड के रूप में देना पड़ेगा। इस पर कोई भिखारी उसके आगे आया, वही करामात दिखाकर सौ रुपये जीत गया।

इस पर आनंद को रोना आया। धन खोने के साथ गाँववालों के बीच उसकी इज्जत जाती रही। उसने अपने मन में जो यह सोचा था कि ये करिश्मे उसके अलावा और कोई कर ही नहीं सकता, लेकिन वे करिश्मे तो बूढ़े व भिखारी तक कर रहे हैं। उसने जिस इच्छा को लेकर ये सारी मंत्र विद्याएँ सीख ली थीं, उसी के द्वारा अब उसके सामने खतरा पैदा होता जा रहा है।

यों सोचकर आनंद उठ खड़ा हुआ और भिखारी के पीछे दूर तक चला गया। गाँव के बाहर भिखारी से मिलकर आनंद ने पूछा—"महाशय, क्या तुमने ये विद्याएँ काशी में तो सीख नहीं लीं?"

"उफ़! ये मामूली विद्याएँ सीखने के लिए क्या काशी जाने की जरूरत है?" भिखारी ने उल्टा सवाल किया।

आनंद ने उसकी आवाज़ को पहचान लिया। उसे काशी में जिस मांत्रिक ने ये विद्याएँ सिखलाई थीं, वही मांत्रिक यह भिखारी है। शायद कल का दाढ़ीवाला भी यही हो, क्या पता?

यों सोचकर आनंद ने उसका गला कसकर पकड़ लिया और पूछा—"सच सच बताओ, तुम कौन हो?"

उस व्यक्ति ने अपना गला छुड़वाकर कहा—"मैंने अपना पेट भरने के लिए एक साधन के रूप में ये विद्याएँ सीख ली हैं। पर मैं यह सोचकर तुम्हारे पीछे-पीछे चला आया कि तुम जैसे धनी आदमी के लिए इन विद्याओं की क्या उपयोगिता है! यह अपनी आँखों से खुद देख लूँ? पर तुम्हारे पिता ने काफी धन कमाकर रखा है! उस धन को लगाकर तुम कोई अच्छा व्यापार क्यों नहीं करते? ये तुच्छ करामतों के पीछे तुम क्यों पड़ते हो?"

ये बातें सुनने पर आनंद की अक़्ल ठिकाने लग गई। उस दिन से उसने अपने पिता के व्यापार में दिलचस्पी लेना प्रारंभ किया और इज्जत की जिंदगी बिताने लगा।

बंदर की करतूत

रामाचारी नामक वैद्य के यहाँ से दामोदर नामक एक दोस्त ने एक हज़ार रुपये उधार लिये, उसके कोई इकरारनामा या गवाह न था। इस वजह से रामाचारी ने जब अपने रुपये वापस माँगा, तब दामोदर ने साफ़ इनकार किया कि उसने उधार नहीं लिया है। यह बात रामाचारी ने अपनी पत्नी को बताई। इस पर पत्नी ने सुझाया–"तुम इसकी चिंता क्यों करते हो, उस धन को वसूलने का तरीक़ा तुम्हारे आराध्य देवता हनुमानजी खुद देख लेंगे।"

दामोदर को जब इस बात का विश्वास हो गया कि रामाचारी ने अपने रुपयों की आशा छोड़ दी है। तब उसने एक हज़ार रुपयों का सोना ख़रीदा और गहने बनाने के लिए गोविंदाचार्य के हाथ सौंप दिया। गोविंदाचार्य ने सोना हड़पकर पीतल के गहने बनाये और उन पर सोने का मुलम्मा चढ़ाकर दामोदर को दिया। दामोदर ने इस धोखे का पता लगाया और पूछा, इस पर उसने बताया–"ये गहने मैंने नहीं बनाये हैं।"

उस धन से गोविंदाचार्य ने मोतीलाल की जमीन पंद्रह सौ में लेने का सौदा पटाया और एक हज़ार रुपये अग्रिम दे दिया। दो हफ़्ते बाद उसने बाक़ी पाँच सौ रुपये चुकाना चाहा, तब मोतीलाल ने कहा–"मैंने तो अपनी जगह की क़ीमत ढाई हज़ार रुपये बताई थी न?"

वैसे मोतीलाल महाजनी करता है। एक बार विश्वनाथ नामक एक आदमी ने मोतीलाल के यहाँ से एक हज़ार रुपये उधार लिया, उसी रात को अपना गाँव छोड़ भागते हुए वह चोरों के हाथ में पड़ गया और अपना सारा धन खो बैठा।

चोरों ने जंगल में एक बरगद के खोखले में वे रुपये छिपाये, एक दिन वैद्य रामाचारी जड़ी बूटियों की खोज करते वहाँ गया। तब एक बंदर ने खोखले में से रुपयों की पोटली उठाकर रामाचारी के समीप फेंक दी। उसमें रामाचारी को एक हज़ार रुपये मिल गये।
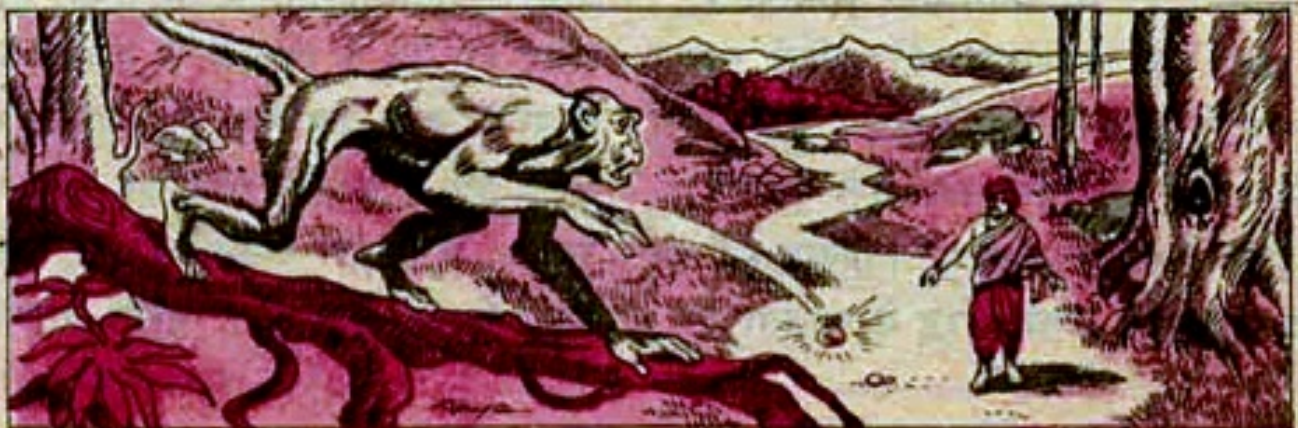
भूत वैद्य

नौ गाँव में विनोद नामक एक भोला व्यक्ति रहा करता था। वह गाँवों में घूमकर खाने की चीज़ें बेचा करता था।

नौ गाँव के समीप के पुराने गाँव में राजनाथ नामक एक दगाबाज रहा करता था। वह एक सज्जन व्यक्ति के रूप में सर्वत्र माना जाता था, मगर मौक़ा मिलते ही वह दूसरों को धोखा देता।

एक दिन उसने जुम्मन को एक नया छाता खरीदते हुए देखा। दूसरे दिन जब पानी बरसने लगा, तब उसने जुम्मन के घर जाकर छाता ले लिया, मगर कई दिन बीत जाने पर भी उसने नहीं लौटाया।

एक दिन राजनाथ को अकेले पाकर जुम्मन ने पूछा–"भाई साहब! तुमने मेरा छाता नहीं लौटाया, क्या भूल गये?"

जुम्मन का भूत-प्रेतों पर विश्वास था, यह बात राजनाथ अच्छी तरह से जानता था।

एक दिन अचानक राजनाथ की मुलाक़ात जुम्मन से हो गई। उसने झट से कोई बहाना बनाकर कहा–"जुम्मन! मैंने तुमसे उस दिन छाता तो लिया, मगर पानी इतना बरस रहा था कि भीगते हुए घर जाने लगा तो जानते हो, क्या हुआ? हमारे गाँव के बाहर बरगद का पेड़ है न? उस पेड़ पर से एक भूत अचानक मेरे आगे कूद पड़ा और छाता खींचकर भागने लगा। मैंने उसे समझाया–"यह छाता तो जुम्मन का है, तुम ले जाओगे तो वह चुप न रहेगा।" तब भूत बोला–"अगर वह तुम्हारी कोई हानि करता है तो तुम यह खबर इस पेड़ के खोखले में बताते जाओ, मैं बाक़ी काम देख लूँगा।". यक़ीन मानो, उसके डर से मैं तीन दिन तक खाट पकड़ा रहा। मैं अभी कल-परसों से फिर से चलने-फिरने लगा हूं। तुम्हीं बताओ, मैं

पुष्पा गौतम

क्या करूँ?" भूत का नाम सुनते ही जुम्मन का कलेजा कांप उठा, उसने कहा–"अच्छा भाई, जाने दो, भूत उठा ले जाता तो मैं भीं क्या कर सकता था?"

नौ गाँव में वीरभद्र नामक एक ओझा था। एक दिन बातचीत के सिलसिले में जुम्मन ने वीरभद्र को अपना छाता भूत के उठा ले जाने की बात बताई।

वीरभद्र ने समझाया–"अजी, अगर मनुष्यों के अन्दर भूत प्रवेश करता है तो मैं छुड़ा सकता हूँ, लेकिन मैं तुम्हारा छाता कैसे ला दे सकता हूँ? चाहे जो हो, मगर बरगद के खोखले में भूत के निवास करने की बात अगर सच है तो मैं किसी न किसी दिन उसकी खबर ज़रूर लूंगा।"

राजनाथ और वीरभद्र के बीच कई दिनों से दुश्मनी थी। क्योंकि राजनाथ ने यह अफ़वाह उड़ाई थी कि भूत-प्रेत नामक प्राणी कहीं होते ही नहीं, वीरभद्र नाहक़ लोगों को धोखा देता है। इस कारण मौक़ा मिलने पर वीरभद्र राजनाथ को इसका पाठ पढ़ना चाहता था।

एक हफ़्ते के बाद दुपहर के वक़्त राजनाथ पूडी-कचौड़ी बेचते एक गाँव से दूसरे गाँव में जा रहा था, एक जगह अचानक जुम्मन की राजनाथ से मुलाक़ात हो गई। राजनाथ के हाथ में छाता था, वह सचमुच जुम्मन का था। जुम्मन ने पूछा–"यह छाता मेरा ही है न?"

"जी हाँ, यह तो तुम्हारा ही है।" राजनाथ बोला।

"तो फिर तुमने कहा था कि इसे भूत खींचकर भाग गया है?"

राजनाथ ने आँखें तरेरकर देखते हुए कहा–"तुम मुझे क्या समझते हो? राजनाथ के हाथ से छाता खींचनेवाला भूत हूँ मैं?" यों कहकर वह आगे बढ़ गया।

इस पर जुम्मन कांप उठा और वहाँ से भाग खड़ा हुआ। भागते-भागते वह वीरभद्र से जा टकराया। वीरभद्र कहीं मंत्र फूँककर लौट रहा था।

"अरे भाई, तुम कांपते क्यों हो?" वीरभद्र ने जुम्मन से पूछा।

"जानते हो, वह छाता उठा ले जानेवाला व्यक्ति राजनाथ नहीं, भूत है। यह बात उसी ने बताई है।" जुम्मन ने कहा।

"ओह, यह बात है?" यों कहकर वीरभद्र ने नीम के पेड़ से एक छड़ी तोड़ डाली और राजनाथ की ओर दौड़ते बोला–"अबे पिशाच! रुक जाओ?"

राजनाथ ने खतरे को भांप लिया। भागने लगा! तब "भाइयो, सुनो! वह तो भूत है! पिशाच है! उसे भागने मत दो।" वीरभद्र चिल्ला उठा। तब खेतों में काम करनेवाले किसानों ने दौड़कर राजनाथ को पकड़ लिया।

इस बीच वीरभद्र आ पहुँचा, राजनाथ की पीठ पर छड़ी बरसाते हुए बोला–"अबे, जानते हो, वीरभद्र भूतों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं? तुम किसी पेड़ के खोखले में पड़े रह जाते, तुम्हें छाते की क्या जरूरत पड़ी? इसका फल भोगो!"

राजनाथ जुम्मन को छाता लौटाते हुए बोला–"भाइयो, मैं भूत-पिशाच नहीं हूँ! राजनाथ हूँ, कृपा करके मुझे छोड़ दो।"

पर वीरभद्र ने राजनाथ की बातों की परवाह नहीं की–"अबे, तुम मुझे समझाते हो कि कौन भूत है और कौन आदमी है? तुम अपना भेस मेरे सामने मत बनाओ! मैं तुम्हारा मारणहोम करूँगा। "ह्रां! ह्रीं! फट!" कहते राजनाथ को पीट-पीटकर बेदम कर दिया।

"जान रही तो लाख पाये!" सोचते राजनाथ वहाँ से भाग खड़ा हुआ।

"जुम्मन, अब चलो, ज़िंदगी भर फिर से वह भूत तुम्हें छेड़ने की हिम्मत न करेगा!" वीरभद्र ने समझाया।

जुम्मन ने सोचा कि राजनाथ को यह बतला दे कि उसने भूत के यहाँ से वीरभद्र की मदद से कैसे अपना छाता वापस पा लिया! मगर इसके बाद फिर कभी राजनाथ से उसकी मुलाक़ात न हुई!

युधाजित की बातें सुन काशी राजा कोई उत्तर दे न पाये, बल्कि सर झुकाकर वहाँ से अंतःपुर में चले गये, अपनी पत्नी से बोले–"हमारी पुत्री सुदर्शन को छोड़ किसी और राजकुमार के साथ विवाह करे तभी हमारी इज्जत बनी रह सकती है, वरना नहीं, तुम्हारा क्या विचार है?"

रानी ने समझाया–"बेटी! तुम्हारे साथ विवाह करने के ख्याल से जब इतने सारे राजकुमार आये हुए हैं, तब तुम सुदर्शन ही के साथ विवाह करने का हठ करके हमारे प्राणों पर खतरा क्यों मोल लेना चाहती हो? युधाजित सुदर्शन के साथ तुम्हें, तुम्हारे पिता तथा मुझ को भी मार डालेंगे। वे तो अत्यंत क्रूर स्वभाव के हैं।"

उसी वक़्त राजा ने समझाया; फिर भी शशिकला आत्महत्या करने को तैयार हो गई, उसने कहा–"यदि आप इन राजाओं से डरते हैं तो मुझे सुदर्शन के हाथ सौंपकर रथ में हमें आप के राज्य की सीमा पार करवा दीजिए, तब अगर युद्ध हुआ तो वे शत्रुओं का निश्चय ही वध कर बैठेंगे।"

"बेटी, कई राजाओं के साथ एक साथ दुश्मनी मोल लेना उचित नहीं है। तुम हठ न करो। तुम्हें मैं सीमा पार करवा दूँ तो उसके आगे वे दुष्ट तुम्हें घेर लेंगे तो तुम लोग क्या कर सकते हो? मुझे एक उपाय सूझ रहा है। सीताजी के विवाह के लिए जैसे एक परीक्षा रखी गई थी,

वैसी एक परीक्षा रखूं! उसमें जो विजयी होगा, उसी के साथ तुम विवाह करो।" राजा सुबाहू ने समझाया।

"पिताजी! इससे भी क्या आप की समस्या हल होगी? उस परीक्षा में कोई विजयी होकर मेरे साथ विवाह करेगा। ऐसी हालत में भी क्या बाक़ी लोग चुप रहेंगे? किसी भी हालत में युद्ध अनिवार्य है। अतः आप महादेवी पर विश्वास करके मेरा विवाह सुदर्शन के साथ कर दीजिए।" शशिकला ने स्पष्ट बताया।

सुबाहू ने शशिकला के निर्णय को स्वीकार किया। सभा में लौटकर निवेदन किया-"महाराजाओ, आज के लिए सभा स्थगित कर देते हैं। कल आप लोगों की इच्छा के अनुसार स्वयंवर होगा। आज कृपया अपने अपने निवासों में चले जाइये।"

राजाओं ने अपने शिविरों में लौटकर नगर के चारों तरफ़ अपनी सेनाओं को पहरे पर नियुक्त कर दिया।

उधर राजा सुबाहू ने गुप्त रूप से विवाह की तैयारियां करवाईं। सुदर्शन को बुलवाकर शास्त्र-विधि से अपनी पुत्री का कन्यादान किया। उस अवसर पर उन्होंने अपने दामाद को दो सौ रथ, कई हज़ार घोड़े, कई सौ दास-दासियां तथा अन्य उपहार भी दिये। तब सुदर्शन की माता मनोरमा से कहा-"बहन! आज से मेरी पुत्री तुम्हारे पुत्र की संपत्ति बन गई है। तुम प्रेमपूर्वक उसके साथ व्यवहार करो।" यों कहकर राजा ने प्रणाम किया।

मनोरमा ने कहा-"भाई साहब! आप ने महाराजा होकर राज्य विहीन मेरे पुत्र के साथ अपनी कन्या का विवाह किया। आप की पुत्री सौंदर्य की प्रतिमा है। आप जैसे उत्तम व्यक्ति अन्यत्र न होंगे। यदि आप की पुत्री का भार हमारा है तो हमारा भार आप का है।"

इस पर सुबाहू ने कहा-"बहन, आप के पुत्र को राज्य विहीन क्यों मानती हैं? क्या मेरा राज्य उसका नहीं है? मैं अपनी

सारी सेना उसे दे देता हूँ। जब हम नीर-क्षीर न्याय को मानते हैं, तब किसी को राजा और किसी को सेवक ही हम क्यों माने? अन्य राजाओं को मैं नियंत्रण में रखने का प्रयत्न करूँगा। फिर भी वे नहीं मानते तो मैं युद्ध करने के लिए भी तैयार हूँ। जगदंबा की सहायता के होते हम चिंता ही क्यों करें?"

"ओह! आप ने कैसी अच्छी बात कहीं? आप का शुभ होगा! जगन्माता के अनुग्रह से मेरा पुत्र अपने पिता का राज्य फिर से प्राप्त कर लेगा। जब क़िस्मत साथ देती है, तब मिट्टी भी सोना बन जाती है। सब कोई समय पर सहायता करेंगे। इस वक़्त मेरे पुत्र की क़िस्मत अच्छी है। उसे किसी प्रकार की हानि न होगी।" मनोरमा ने कहा।

इस बीच शिविरों में आराम करनेवाले राजाओं को मंगल वाद्यों की ध्वनि सुनाई दी। तब राजाओं ने तरह-तरह से व्याख्या करना शुरू किया। किसी ने कहा—"ये मंगल वाद्य कैसे?" किसी ने कहा—"ये तो विवाह के वाद्य जैसे लगते हैं!" किसी ने कहा—"अरे, ये राजा हम सब की आँखों में धूल झोंककर सुदर्शन के साथ राजकुमारी का विवाह तो नहीं कर रहे हैं?" उसी वक़्त राजा सुबाहू ने प्रवेश

करके कहा—"महाराजाओ, आप सब विवाह के भोज पर पधारियेगा।"

यह समाचार राजाओं ने स्नेहपूर्वक नहीं सुना। तब काशीराजा सुबाहू ने समझाया—"महाशयो, मैं आखिर क्या कर सकता हूँ? मैंने अनेक तरह से समझाया, पर मेरी पुत्री ने मेरी बात नहीं मानी, उसने सुदर्शन के साथ विवाह किया। आप कृपया मुझ पर अनुग्रह करके भोज में भाग लीजिएगा। मेरी इज्जत बचाइयेगा।"

इस पर कई राजाओं ने एक स्वर में बताया—"राजन, हमारे भोजन तो हो चुका है। इस वक़्त कोई भी दावत में न आवेंगे। आप भी अर्द्ध रात्रि में संपन्न

विवाह में भाग लेकर थक गये होंगे। आप जाइये, हम भी चले जायेंगे।"

सुबाहू उन राजाओं के संबंध में शंका के साथ ही अपने महल को लौट गये।

सुबाहू के जाते ही कुछ राजाओं ने सलाह दी–"हम सुदर्शन का वध करके राजकुमारी को उठा ले जायेंगे।" कुछ ने बताया–"यह तो अन्याय है! विवाह का उत्सव देख हम अपने रास्ते चल देंगे।"

इस बीच राजा सुबाहू ने विवाह के सारे रस्म पूरा कराये, अपनी पुत्री व दामाद की विदाई का कार्य संपन्न कर रहे थे, तब कुछ लोगों ने आकर बताया–"महाराज! आप इस समय वर-वधू को न भेजियेगा! रास्ते में दुश्मन राक्षसों जैसे टोह लगाये बैठे हैं।"

राजाओं का उद्देश्य सुबाहू जानते थे। इसलिए उनकी बातों पर यक़ीन करके राजा ने विदाई करने से संकोच किया।

इस पर सुदर्शन ने उन्हें समझाया–"महाराज! आप संकोच मत कीजिएगा! जब महादेवी मेरे पक्ष में हैं, तब ये राजा मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं? हम हमारे आश्रम में सुखपूर्वक रहेंगे। आप यह मत सोचियेगा कि आश्रम में गृहस्थी कैसी? वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य के सामने आप के नगर किस काम के हैं?"

काशी राजा ने अपने दामाद को अपार संपत्ति दे विदा किया। साथ ही वे सेना के साथ उनके साथ निकल पड़े।

रास्ते में सुदर्शन की प्रतीक्षा करनेवाले राजाओं ने दूर से ही उन्हें देख कहा–"देखो, वही रथ है! वही सुदर्शन है! वह अपनी पत्नी के साथ जा रहा है। चलो, उसे पकड़कर पीटेंगे।"

यों कहते सभी राजा उस पर आक्रमण करने को हुए, तब सुबाहू ने उन्हें रोका। सुदर्शन ने मंत्र जापते महादेवी का ध्यान किया। उस वक़्त शत्रुजित और युधाजित उस पर टूट पड़े। सुबाहू ने वीरावेश में आकर शंख ध्वनि की, युधाजित पर बाणों

की वर्षा की। दोनों के बीच भयंकर युद्ध हुआ।

इस बीच जगदांबा दिव्य आकृति के साथ अनेक आयुधों व पुष्पमालाओं सहित सिंह पर सवार हो प्रत्यक्ष हो गईं। आनंद के मारे सुदर्शन का शरीर पुलकित हो उठा। उस वक़्त महादेवी को दिखाकर अपने ससुर से कहा–"अब हमें भय ही किस बात का है?" यों कहकर वह रथ से उतर पड़ा, अपनी पत्नी और ससुर को साथ ले जाकर देवी के चरणों पर प्रणाम किया।

हाथी सिंह को देख डर गये और डर के मारे घींकार करने लगे, तब सिंह हाथियों को देख गरज उठा। उसी वक़्त भयंकर रूप से झंझावात हुआ, सर्वत्र भीभत्स दृश्य पैदा हुआ। सभी राजा घबरा गये, वे देखते ही रह गये।

उस समय सुदर्शन ने सेनापति से कहा–"महादेवी हमारी सहायता के लिए आ पहुँची हैं। आप संकोच किये बिना राजाओं पर हमला कर दीजिएगा।"

तब काशी राजा की सेनाएँ दुश्मन की सेना पर टूट पड़ीं।

सभी राजाओं को चकित देख युधाजित ने उन्हें उत्तेजित करते हुए कहा–"कोई औरत सिंह पर सवार हो आ गई तो क्या आप का दिमाग खराब हो गया है? एक दुर्बल व्यक्ति एक औरत को अपनी मदद के लिए ले आता है तो क्या आप सब इतने राजा घबरा गये? हम लोग पल भर में सुदर्शन का वध करके राजकुमारी को अपने वश में ले लेंगे। चलो, उसे पकड़ लो।" यों सब को उत्तेजित कर अपने दौहित्र शत्रुजित को साथ ले सुदर्शन के साथ युद्ध करने लगा।

उस अवसर पर महादेवी ने सभी राजाओं को अनेक रूपों में दर्शन देकर सब के साथ युद्ध किया। पल भर में युधाजित और शत्रुजित बाणों से घायल हो मर गये। राजा सुबाहू ने आनंद

बाष्प गिराते हुए उस पराशक्ति का स्तोत्र किया। तब उन्होंने महादेवी से कहा– "महादेवीजी! आप के दर्शन पाकर मैं धन्य हो गया हूँ! आप कृपया शाश्वत रूप से मेरे हृदय में बस जाइयेगा। आप इस काशी नगर में ही रह जाइये। कहा जाता है कि जब तक यह पृथ्वी है, तब तक यह काशी नगरी भी रह जाएगी। जब तक काशी रहेगी, तब तक आप यहीं रहकर हमें शत्रु-भय से मुक्त कीजिए। यही वर मैं आप से चाहता हूँ।"

. महादेवी ने मान लिया।

इसके बाद सुदर्शन ने महादेवी का स्तोत्र किया। तब देवी से बोला– "महादेवीजी! अब मेरा कर्तव्य क्या है? मैं स्वयं असमर्थ हूँ, फिर भी आप की सहायता रही तो मैं सब कुछ साध सकता हूँ।"

इस पर महादेवी ने समझाया–"तुम अपनी पत्नी के साथ अयोध्या जाकर सिंहासन पर बैठो। उचित रूप से राज्य करो। मैं तुम्हारी रक्षा करती रहूँगी। तुम प्रत्येक अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी के दिन मेरी पूजा करो। शरत काल मुझे अत्यंत प्रिय है। तुम नवरात्रि की पूजाएँ अवश्य करो! माघ, चैत्र, आश्विन तथा आषाढ़ मासों में मेरे उत्सव मनाओ।"

इसके बाद एक एक करके सभी राजाओं ने सुदर्शन को प्रणाम कर महादेवी की स्तुति की, जैसे इन्द्र आदि देवताओं के लिए की जाती है। अंत में उन लोगों ने सुदर्शन को अपने चक्रवर्ती के रूप में स्वीकार करते हुए निवेदन किया–"महात्मा! आप अयोध्या में रहकर हम पर शासन कीजिएगा। आप के अनुग्रह से ही हमने जगन्माता को अपनी आँखों से देखा है।"

इसके बाद सभी राजा अपने अपने देश को चले गये। तब काशी राजा सुबाहू ने अपने दामाद और पुत्री को विदा किया।

सुदर्शन के अयोध्या पहुँचने के पहले ही वहाँ पर यह समाचार मिल गया। इस कारण मंत्री लोग मंगल वाद्यों के साथ

अगवानी करके सुदर्शन और उनकी पत्नी को नगर के अन्दर ले गये।

सुदर्शन अयोध्या में प्रवेश करते ही अपनी सौतेली माता के पास गया, अपने पुत्र की मृत्यु का समाचार पाकर रोनेवाली लीलावती को प्रणाम कर बोला—"माताजी, आप के पुत्र और पिता का मैंने वध नहीं किया है। आप के चरणों की शपथ लेकर कहता हूँ कि महाशक्ति ने ही उनका वध किया है. किसी ने जो दुष्ट कार्य किया है, उसके लिए आप क्यों चिंता करती हैं? आप मुझे अपने पुत्र के समान मान लीजिए। मैं अपनी माता और आप के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखूंगा। मैं सदा आप की मातृ सेवाएँ करूंगा। मैं जब बच्चा था, तब आप के पिता ने मुझे राज्यच्युत किया, उसे मैंने अपना प्रारब्ध माना, पर मैं दुखी नहीं हुआ। आप के पिता ने मेरे मातामह का वध किया, तब मेरी माता असहनीय दुख के साथ मुझे जंगल के रास्ते ले जाने लगीं, उस वक़्त डाकुओं ने हम को लूटा। इसके बाद हमने गंगाजी के तट पर एक ऋषि के आश्रम में आश्रय लिया। उनके अनुग्रह से ही हम आज इस स्थिति में पहुँचे। मैं सच बताता हूँ कि किसी के प्रति मेरे मन में द्वेष भाव नहीं है।"

सुदर्शन की बातें सुन लीलावती लजाते हुए बोली—"मेरे मना करते रहने पर भी मेरे पिता ने तुम्हारे साथ द्रोह किया, परिणाम स्वरूप वे तो मर गये और मेरे पुत्र की मृत्यु का भी कारण बने। तुम्हारी माता मेरी दीदी हैं। तुम मेरे पुत्र हो। इसलिए मैं चिंता ही क्यों करूँ? क्या मैं नहीं जानती कि मेरे पुत्र व पिता की मृत्यु का कारण तुम नहीं हो?"

इसके बाद सुदर्शन ने अपने मंत्रियों के द्वारा एक सोने का सिंहासन तैयार करवाया, उस पर महादेवी की मूर्ति की प्रतिष्ठा कराई, प्रति दिन उनकी पूजा करने का आदेश दिया, राज्याभिषेक कराकर वह सुखपूर्वक शासन करने लगा।

सच्चा अपराध

महाराजा जनप्रिय के मन में एक बार यह इच्छा पैदा हुई कि ईमानदारी से काम करनेवाले राज कर्मचारियों का विशेष रूप से सम्मान करे। इस वास्ते राजा ने दो मंत्रियों को नियुक्त किया। उन्होंने हर एक कर्मचारी पर निगरानी रखकर अपनी राय राजा को दी। दोनों मंत्रियों की दृष्टि में जो कर्मचारी ईमानदार निकलेंगे, उन्हें एक महीने का वेतन पुरस्कार के रूप में देने का निर्णय किया।

दोनों मंत्रियों ने एक महीने तक सभी कर्मचारियों पर निगरानी रखी और राजा को अपनी राय दी।

कुल मिलाकर राज कर्मचारी दो सौ थे। पर मंत्री गोविंद की नजर में ईमानदारी के साथ काम करनेवाले राज कर्मचारियों की संख्या पचास थी, लेकिन ईश्वर मंत्री की दृष्टि में एक सौ पचास। पर दोनों की दृष्टि में ईमानदारी से काम करनेवाले सिर्फ़ पाँच ही कर्मचारी ठहरें।

महाराजा जनप्रिय ने प्रसन्नतापूर्वक उन पाँचों कर्मचारियों को एक महीने की तनख्वाह पुरस्कार स्वरूप दे दी। इस पर अन्य कर्मचारियों ने राजा से पूछा कि उन्हें यह बता दे कि किस आधार पर ईमानदारी का निर्णय किया गया है।

राजा ने कहा–"मैंने दो व्यक्तियों को राज कर्मचारियों की ईमानदारी का पता लगाने के लिए नियुक्त किया, दोनों ने जो निर्णय दिया, उसके आधार पर पाँच व्यक्तियों को मैंने पुरस्कार दिया है।"

इस पर राज कर्मचारियों ने राजा से पूछा–"महाराज! क्या बाक़ी एक सौ पंचानवें कर्मचारी ईमानदार नहीं हैं?"

"नहीं, ऐसी बात नहीं! एक मंत्री ने कुछ लोगों की सिफ़ारिश की और दूसरे ने

सरोजा अग्रवाल

और लोगों की। पर दोनों ने समान रूप से जिनकी सिफ़ारिश की, मैंने उन्हें ही पुरस्कार दिया है।" राजा ने समझाया।

एक ने कहा—"महाराज! यह तो अन्याय है।" राजा ने उसे बताया—"अगर एक मंत्री तुम्हारे कार्य से प्रसन्न हैं और दूसरे नहीं हैं तो यह तृटि तुम लोगों की ही है।"

इस पर सभी लोग असंतुष्ट होकर चले गये। दूसरे दिन चिरंजीवी देशाटन करते हुए उस नगर में आये। राजा जनप्रिय ने चिरंजीवी को महान ज्ञानी समझकर विशेष रूप से राजमहल में उनका स्वागत किया। राजा ने चिरंजीवी को सारा वृत्तांत सुनाकर पूछा—"महानुभाव, यह बताने की कृपा कीजिए कि एक व्यक्ति की कार्य कुशलता की जाँच करने के लिए दो व्यक्तियों को नियुक्त किया गया, तब दोनों ने भिन्न प्रकार से अपनी राय दी। ऐसी हालत में हमें किसकी राय को स्वीकार करना होगा?" चिरंजीवी ने उत्तर दिया—"महाराज! मेरा विचार है कि जांच करनेवालों में से एक व्यक्ति दण्ड पाने योग्य है।"

राजा को चिरंजीवी का विचार समुचित मालूम हुआ। दरियाफ़्त करने पर इस बात का पता चल गया कि ईश्वर मंत्री ने पहले ही राज कर्मचारियों को चेतावनी दे उनसे घूस लिया और ऐसे व्यक्तियों के नाम अपनी सूची में जोड़ लिया है। पर ईश्वर मंत्री को जिन लोगों ने घूस दिया, उन लोगों ने राजा से यह बात कहने में संकोच का अनुभव किया। पर वे लोग यह बात नहीं जानते थे कि उन पर गोविंद मंत्री भी निगरानी रखे हुए हैं।

लेकिन राजा के दिमाग में यह छोटी-सी बात नहीं सूझी। राजा ने गोविंद मंत्री की तारीफ़ की और उसके द्वारा सिफ़ारिश किये गये बाक़ी पैंतालीस कर्मचारियों को पुरस्कार दिया। तब ईश्वर मंत्री तथा उन्हें घूस देनेवाले कर्मचारियों को दण्ड दिया और चिरंजीवी का बढ़िया सत्कार किया।

परिवर्तन

अमरावती नगर पर राजा शिवसेन शासन करते थे। एक दिन वे राजमहल की छत पर टहल रहे थे, तब रास्ते चलनेवाले भिखारियों को देख उनके मन में दया आ गई। उन्होंने निश्चय किया कि वे ऐसा इंतजाम करे जिससे उनके राज्य में एक भी भिखारी न हो!

राजा ने अपने मंत्री को बुलाकर सुझाया कि इसके वास्ते देश में बहुत बड़ा परिवर्तन होना चाहिए और उस परिवर्तन के अनुकूल कोई योजना बनावे।

मंत्री ने थोड़ी देर तक सोचकर बताया–"महाराज! आप का विचार तो प्रशंसनीय है, मगर गरीबी भिखारियों की सृष्टि करती है। इसलिए उस गरीबी के मूल कारणों पर विचार करना चाहिए, ऐसा न करके गरीबी की वजह से भिखारी बने हर एक व्यक्ति की आर्थिक सहायता करते जायेंगे तो वह धन वृथा हो जाएगा।"

"गरीबी का मूल कारण चाहे जो हो, पर गरीबी सहन करने योग्य नहीं है। उसको दूर करने से हमेशा भलाई ही होती है।" राजा ने अपना दृढ़ निर्णय सुनाया।

तब मंत्री ने सलाह दी–"महाराज, धन किसी भी समस्या को हल नहीं कर सकता! धन के कारण सुधरनेवाले लोग भी हैं और बिगड़नेवाले भी। केवल दरिद्रों में ही नहीं, धनियों में भी धन की वजह से बिगड़ जानेवाले अनेक लोग हैं।"

"लेकिन यह बात गरीबों और भिखारियों के लिए लागू नहीं हो सकती। चाहे तो कुछ दरिद्रों को धन की सहायता देकर हम पता लगायेंगे कि वे सुधर जाते हैं या बिगड़ते हैं!" राजा ने कहा।

राजेन्द्र शर्मा

इसके बाद राजा और मंत्री वेश बदलकर नगर की एक सराय में पहुँचे। वहाँ पर चार गरीब व्यक्ति बैठे-बैठे बात कर रहे थे। सजा और मंत्री उनके समीप जा बैठे और उनसे बातचीत शुरू की।

चारों में से पहला व्यक्ति भिखारी था, जो भिखारी का ही लड़का था। जब वह दस साल का था, तभी उसके माँ-बाप मर गये थे, तब से वह अपने बाप का पेशा अपनाकर भीख मांग रहा है!

दूसरे ने बताया कि वह एक गरीब किसान है। उसके पास जो थोड़ा-बहुत खेत था, वह पिछले वर्ष बाढ़ का शिकार हो गया जिससे वह कंगाल बना, इस कारण अपना खेत इकरारनामे पर दे वह पेट भरने नगर में चला आया है।

तीसरा आदमी फल का व्यापारी था। उसने व्यापार करते जो कुछ धन जोड़ रखा था, उससे अपनी बहन की शादी की, इसके बाद उसका बाप बीमार पड़ा। इस पर उसने व्यापार को तिलांजली देकर पिता के इलाज में रही-सही पूंजी खर्च कर डाली। यों वह भी भिखारी बन बैठा। आखिर बाप मर गया, उसके घर माँ और एक छोटी बहन बच रही हैं। एक छोटा-सा मकान है, मगर देहात में उस मौसम में कोई काम नहीं मिलता, जिससे वह मजदूरी करने के वास्ते शहर चला आया है!

चौथा आदमी अपने पिता की मौत के समय दस एकड़ जमीन का मालिक था। लेकिन वह कोई काम-धाम करना नहीं चाहता था, इसलिए उसके पास जो कुछ पूंजी थी, शराब और जुए में खर्च कर डाला। इस पर नाराज़ हो उसकी औरत अपने मायके चली गई। तब भीख मांगने वह भी शहर में पहुँच गया है।

इसके बाद जब सब लोग सो गये, तब राजा और मंत्री ने चारों आदमियों की जेबों में चार सोने के सिक्के डाल दिये और अपने रास्ते चल दिये। सवेरा होते

ही चारों गरीबों ने उठकर अपनी जेबों में सोने के सिक्के पाये और वे बहुत खुश हुए। उनमें से किसान और फल का व्यापारी अपने गाँव लौट गये, सिक्के बेचकर उस धन से अपने पेशे जारी रखे। पर शराबी उस धन को शराब पीकर फिर वह भिखारी ही बना रहा। वह उस सराय में ही रहने लगा।

लेकिन भिखारी की समझ में न आया कि सोने के सिक्के का उपयोग कैसे करे? उसके पेशे के लिए वह धन किसी भी रूप में काम नहीं दे सकता। वह भीख मांगकर अपना पेट भरता है, जिससे उसके दिन कट जाते हैं। सोना तो किसी भी रूप में उसे काम न देगा। अगर वह उसे किसी के हाथ बेचना भी चाहे तो कई तरह के सवाल करेंगे और उस पर चोरी का इलजाम भी लगा सकते हैं। यों विचार करके उसने उस सिक्के को सराय की दीवार के पास गाड़ने का निश्चय किया और आधी रात के वक़्त वह गड्ढा खोदने लगा।

उसी वक़्त सिपाही एक चोर का पीछा करते हुए उधर से आ निकले और भिखारी को ही चोर समझा। उसके हाथ सोने का सिक्का देख राजा के पास पकड़ ले गये। राजा और मंत्री ने उसे पहचानकर छोड़ दिया। बाक़ी तीनों का पता लगाने पर मालूम हुआ कि पहले से ही जो लोग कोई न कोई पेशा करते हुए कंगाल बन बैठे थे, वे उस धन के प्राप्त होने से सुधर गये हैं; पर जिनका अपना कोई पेशा न था, वे धन की सहायता पाकर भी सुधर न पाये।

इस पर राजा से मंत्री ने बताया— "महाराज, जो सच्चा दरिद्र है, वह खर्च करने के लिए धन हीन नहीं होता, पर उत्पादन करने के लिए पूंजी का अभाव रखनेवाला ही धन हीन होता है। ऐसे लोगों की ही आर्थिक सहायता वक़्त पर मिलनी चाहिए।"

मंत्री की इस सलाह को राजा ने मान लिया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अक्तूबर १९७९ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

P. Sundaram

★

B. Bhansali

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो: जीविका हमारी है!

द्वितीय फोटो: साधना तुम्हारी है!!

प्रेषक: नेमिचन्द राठौर, १०, नैनीयप्प नायकन स्ट्रीट, मद्रास - ३

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

हुर्रे
असोका ग्लूकोज
मिल्क बिस्कुट !
ASOKA
Glucose

DADDY
MUMMY
AND...
I
" ये सब मैंने अपने
एको स्केच पेनसे
बनाये हैं।"
EKCO
स्केच पेन
रंग ही रंग... जिनसे बच्चों को प्यार है. वे
चाहते हैं—नित नये चित्र बनाना.
अपने बच्चों की सुप्त कला को प्रोत्साहन
दीजिए... उन्हें एको स्केच पेन का
आकर्षक सेट उपहारस्वरूप दीजिए.
ये कई मनपसंद रंगों में मिलते हैं.
EKCO
SKETCH PEN
वितरक :
किरण एण्ड कंपनी,
७३/८, शामसेट स्ट्रीट, बम्बई ४०० ००२
फोन : ३२४४३२
एको स्केच पेन से लिखने का मज़ा ही कुछ और है.
ADVERTS/WP/216/HIN/68

CHANDAMAMA (Hindi) AUGUST 1979 Regd. No. M. 5452

तिकोनी टोपी
एक इतना बड़ा कागज़ लो जिसकी लम्बाई उसकी चौड़ाई से डेढ़ गुना हो. जैसे ५१×३४ से.मी. (वैसे किसी अखबार का एक पूरा पन्ना ले सकते हो).

पहले कागज़ को ऊपर से नीचे की ओर वाली दानेदार रेखा पर से मोड़ लो. फिर उसे सीधा कर लो. फिर कागज़ को सभी दानेदार सीधी रेखाओं पर से दिखाये गये तीरों की दिशा में मोड़ो.

इसके बाद दोनों कोनों को बीच की ओर मोड़ो.

अब नीचे के दोनों पल्लों को ऊपर की ओर मोड़ो. एक को अगली तरफ और दूसरे को पिछली तरफ. बस टोपी तैयार है. पहनो और मुस्कुराओ!

पॉपिन्स

५ फलों के स्वाद –
रासबेरी, अनन्नास,
नींबू, नारंगी व मोसंबी.